16 नवंबर, 2018 : राष्ट्रभाषा गौरव उत्सव कार्यक्रम

डॉ. स्नेह ठाकुर का राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान
डॉ. आशु खन्ना ग्रहण करते हुए।

सन्तोष खन्ना के नाटक
'सेतु के आर पार' का लोकार्पण।

डॉ. शिखा कौशिक की कृति
'नूतन रामायण' का लोकार्पण

श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण की
'समग्र बाल साहित्य' पुस्तक का लोकार्पण

आर्यवर्ती सरोज आर्य के उपन्यास
'छोटी मालकिन : स्त्री एक तितिक्षा' का लोकार्पण

डॉ. हेमराज बोहरा की पुस्तक
'सांस्कृतिक चेतना' का लोकार्पण

16 नवंबर, 2018 : राष्ट्रभाषा गौरव उत्सव कार्यक्रम

मंचासीन डॉ. सत्यनारायण जटिया, पू.के.मं. एवं संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष, पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप, पूर्व महासचिव लोक सभा एवं प्रतिष्ठित संविधानविद्, डॉ. अवनीश कुमार, अध्यक्ष, वै. एवं त.श. आ. एवं निदेशक, कें.हि.नि., डॉ. रामशरण गौड़, अध्यक्ष, दिल्ली लायब्रेरी बोर्ड, प्रो. पूरनचंद टंडन, हिंदी विभाग, दि.वि. एवं डॉ. रमा, प्राचार्य, हंसराज कॉलेज, श्रीमती सत्या बहिन, अध्यक्ष, संसदीय हिंदी परिषद्, श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण, अध्यक्ष, प.सा.प., डॉ. कीर्ति काले, प्रतिष्ठित कवियत्री मंचासीन। वि.भा.प. की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना अतिथियों का परिचय।

अतिथियों का दीप प्रज्ज्वलन

डॉ. कीर्ति काले का मंच संचालन

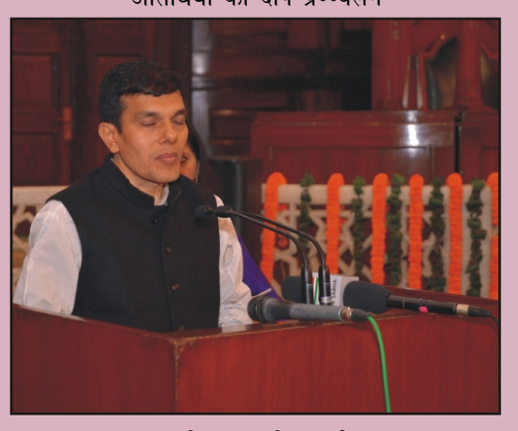

सरस्वती वंदन श्री रामलोचन

मुख्य अतिथि डॉ. जतिया का स्वागत

महिला विधि भारती RNI. No. 61909/95

16 नवंबर, 2018 : राष्ट्रभाषा गौरव उत्सव कार्यक्रम

संसदीय हिंदी परिषद की अध्यक्ष, श्रीमती सत्या बहिन का स्वागत भाषण

सभी अतिथि डॉ. गुरुचरण सिंह को राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान प्रदान करते हुए।

डॉ. प्रत्यूष वत्सला का राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान

श्री रमेश चंद सभ्भरवाल को राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान

डॉ. अनीता कपूर को राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान

Published & Printed by Santosh Khanna On Behalf of Vidhi Bharati Parishad, BH/48, (Poorvi) Shalimar Bagh, Delhi-88, Mobile : 09899651272 & Printed at Archana Printers, 1/1955, Street No. 22-A, East Ram Nagar, Shahadra, Delhi-32, Ph. : 22135900, M : 9811357243

ISSN : 0976-0024

अक्टूबर-दिसंबर 2018
अंक : 97

महिला Mahila विधि भारती Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिन्दी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

Editor-in-Chief : Santosh Khanna

अक्तूबर-दिसंबर अंक : 97 2018
October-December ISSN : 0976-0024

महिला
Mahila

विधि भारती
Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज ी) शोध पत्रिका
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

ISSN 0976-0024

प्रधान संपादक
सन्तोष खन्ना
संपादक
डॉ. उषा देव

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

Indexed at Indian Documentation Service, Gurugram, India
Citation No. MVB-25/2018 Impact Factor : 5.25

विधि भारती परिषद्
बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)
मोबाइल : 09899651872, 09899651272
फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335
E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com
Website : www.vidhibharatiparishad.in

'महिला विधि भारती' पत्रिका

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

Website : www.vidhibharatiparishad.in

अंक : अंक 97 (अक्तूबर-दिसंबर, 2018)

प्रधान संपादक : सन्तोष खन्ना, **संपादक :** डॉ. उषा देव

बोर्ड ऑफ रेफरीज एवं परामर्श मंडल

1. डॉ. के.पी.एस. महलवार : चेयर प्रो., प्रोफेशनल एथिक्स, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, न.दि.
2. डॉ. चंदन बाला : डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, जयनारायण व्यास वि.वि., जोधपुर
3. डॉ. राकेश कुमार सिंह : डीन एवं विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, लखनऊ विश्वविद्यालय
4. डॉ. किरण गुप्ता : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, दिल्ली विश्वविद्यालय
5. न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर : पूर्व न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय, पूर्व सदस्य, राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग, नई दिल्ली।
6. प्रो. (डॉ.) सिद्धनाथ सिंह : डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
7. प्रो. (डॉ.) गुरजीत सिंह : संस्थापक वाइस चांसलर, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी एवं न्यायिक अकादमी, असम
8. श्री हरनाम दास टक्कर : पूर्व निदेशक, लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली

प्रदेश प्रभारी

1. प्रो. देवदत्त शर्मा (उत्तर प्रदेश) 09236003140
2. प्रो. (डॉ.) सुरेंद्र यादव (राजस्थान) 09414442947

परिषद् की कार्यकारिणी, संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. रेनू नूर (कोषाध्यक्ष)
5. श्री अनिल गोयल (सचिव, प्रचार)
6. डॉ. प्रवेश सक्सेना (सदस्य)
7. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. श्री जी.आर. गुप्ता (सदस्य)
10. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
11. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
12. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
13. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
14. डॉ. एच. बालसुब्रह्मण्यम् (सदस्य)
15. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
16. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

शुल्क दरें

वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए
आजीवन शुल्क 5,000/-- रुपए
संस्थागत वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए
संस्थागत आजीवन शुल्क 20,000/-- रुपए

अंक 97 में

1.	1984 के दंगों पर दिल्ली उच्च न्यायालय का फ़ैसला / **संपादकीय**	--	307
2.	भारतवर्ष में सांस्कृतिक विविधता एवं एक समान नागरिक संहिता : विश्लेषण एवं संभावनाएँ / **डॉ. एस.एस. दास एवं कीर्तिका सिंह**	--	312
3.	भारत भारत है इंडिया नहीं / **प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी**	--	320
4.	बाबा साहब भीमराव अंबेडकर की दृष्टि एवं सामाजिक न्याय / **प्रो. विभा त्रिपाठी एवं शंभुशरण मिश्रा**	--	325
5.	धारा 497 हटाने का अर्थ / **संतोष बंसल**	--	331
6.	सूचना का अधिकार : सभी तालों की चाबी / **प्रेम प्रकाश मेहरा**	--	343
7.	संसद भवन की ख़ौफ़नाक दास्ताँ / **डॉ. दीप्ति गुप्ता**	--	346
8.	बेड़ियाँ (कहानी) / **अरविंद जैन**	--	348
9.	पारिवारिक मूल्य : बच्चे और आप / **डॉ. शकुंतला कालरा**	--	351
10.	सरकारी कर्मचारियों की छंटनी और सामाजिक समस्या : एक नैतिक मूल्यांकन / **डॉ. वेद प्रकाश**	--	355
11.	प्रकाशन विभाग द्वारा सन्तोष खन्ना की 'उपभोक्ता के अधिकारों' पर पुस्तक का लोकार्पण (पुस्तक लोकार्पण रिपोर्ट) / **रेनू नूर**	--	359
12.	कोयल (कविता) / **डॉ. उषा देव**	--	362
13.	सागर और रात (कविता) / **अरविंद घोष (अनु. सन्तोष खन्ना)**	--	362
14.	भारत में विधिक सहायता : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन / **डॉ. डी.के. सिंह**	--	363
15.	राजस्थान के जैसलमेर तथा पोखरण के मरुस्थल में खेती-बाड़ी के विकास में कृषि विज्ञान केंद्र की भूमिका / **डॉ. अनिल कुमार यादव एवं अरूण कुमार**	--	370
16.	संसद के केंद्रीय कक्ष में राष्ट्रभाषा उत्सव कार्यक्रम (रिपोर्ट) / **डॉ. विदुषी शर्मा**	--	375
17.	(1) सबरीमाला मंदिर पर उच्चतम न्यायालय का फ़ैसला; (2) विभाजन त्रासदी का दंश : न्यायमूर्ति सेन का फैसला / **सन्तोष खन्ना**	--	379
18.	कभी कभार (कविता) / **रविंद्रनाथ टैगोर (अनु. सन्तोष खन्ना)**	--	383
19.	Positions of the Migrant Workers From India : A Brief Survey **/ Dr. Archana Vashishth**	--	384
20.	Rashtra Bharati Samman : Some After Thoughts **/ Birbhadra Karkidholi**	--	392

लेखक मंडल

Dr. S.S. Das : Assistant Professor, Centre For Juridical Studies, Dibrugarh University- 786004, Assam, India, **Mobile :** 91-9435594172

Kirtika Singh : Law Scholar, SOL, UPES, Dehradun, U.K.

प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी : सदस्य, केंद्रीय हिंदी समिति, भारत सरकार, 1764, औट्रम लाइंस, डॉ मुखर्जी नगर (किंग्ज्वे कैंप), दिल्ली-110009

प्रो. विभा त्रिपाठी एवं शंभुशरण मिश्रा : विधि संकाय, काशी हिंदू विश्वविद्यालय

संतोष बंसल : ए 1/7, मियाँवाली नगर, पश्चिम विहार, दिल्ली-110085

प्रेम प्रकाश मेहरा : सहायक आचार्य, सेठ मोतीलाल विधि महाविद्यालय, झुंझुनूँ (राजस्थान), **मोबाइल :** 9887818190

डॉ. दीप्ति गुप्ता : पूर्व प्राध्यापक, पुणे

अरविंद जैन : वरिष्ठ अधिवक़्ता, उच्चतम न्यायालय एवं साहित्यकार

शकुंतला कालरा : पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संपर्क : एन.डी. 57, पीतमपुरा, दिल्ली-110034, **मोबाइल नं. :** 9958455392

डॉ. वेद प्रकाश : सहायक निदेशक (संकाय सदस्य), नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ लेबर इकोनॉमिक्स रिसर्च एंड डेवलपमेंट, नीति आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली।

रेनू नूर : के-92, शकूरपुर, आनंदवास, दिल्ली-110034

डॉ. उषा देव : सेवानिवृत्त, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. डी.के. सिंह : प्राचार्य, राजकीय विधि महाविद्यालय, अजमेर

डॉ. अनिल कुमार यादव (निदेशक) एवं अरूण कुमार (अनुसंधान सहायक) : राष्ट्रीय श्रम अर्थशास्त्र अनुसंधान एवं विकास संस्थान, नीति आयोग, दिल्ली।

डॉ. विदुषी शर्मा : काउंसलर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय ओपन यूनिवर्सिटी, दिल्ली
ई-मेल : Dr. Vidushi Sharma <drvidushisharma9300@gmail.com

सन्तोष खन्ना : प्रधान संपादक, 'महिला विधि भारती', त्रैमासिक पत्रिका

Dr. Archana Vashishth : Assistant professor, B.S. Anangpuria Institute of Law, Alampur, Faridabad

बीरभद्र कार्कीदोही : नेपाली भाषा के साहित्यकार, गंगटोक, सिक्किम, **मो.** 9733268722

संपादकीय

1984 के दंगों पर दिल्ली उच्च न्यायालय का फैसला

1984 में देश भर में हुए सिखों के नरसंहार के संबंध में दिल्ली के उच्च न्यायालय ने कांग्रेस के बड़े नेता सज्जन कुमार को तो उम्र क़ैद का दंड सुनाते हुए अपने इस फ़ैसले में क़ानून और व्यवस्था के संबंध में कई महत्त्वपूर्ण बातें कही हैं। फ़ैसले में कहा गया है कि इस प्रकार के रक्तपात करने वालों को दंड देने के लिए देश की विधि व्यवस्था को मज़बूत किया जाना चाहिए। 1984 के दंगों के दौरान 2700 से अधिक सिखों की हत्या करना वस्तुतः अविश्वनीय घटना है और इन दंगों के दौरान जिस प्रकार दिल्ली पुलिस ने कार्य किया उससे स्पष्ट हो जाता है कि उनकी इन जघन्य हत्याओं में पूरी मिली भगत थी। इसके साथ ही इन मामलों में राजनीतिक समर्थन के कारण इनमें इतनी देरी हुई।

दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति एस. मुरलीधर और विनोद गोयल ने सज्जन कुमार का यह एतिहासिक फ़ैसला सुनाते हुए कहा कि सत्य की जीत होगी और न्याय होगा। इससे 1984 के दंगों पीड़ितों को न्याय मिलने के बारे में थोड़ी आशा बँधी है। फ़ैसले में यह भी कहा गया कि ''यह स्वतंत्रता के समय विभाजन त्रासदी के समय हुई हिंसा के बाद की यह सबसे बड़ी हिंसा थी। इस दौरान पूरा तंत्र विफल हो गया था।''

यह हिंसा राजनीतिक लाभ के लिए करवाई गई थी। सज्जन कुमार दंगा भड़काने के दोषी हैं। यह मानवता के ख़िलाफ़ अपराध था और अपराधियों को राजनीतिक संरक्षण प्राप्त था। जिन मामलों में राजनीतिक दलों की मदद मिलती हो ऐसे मामलों को न्याय तक ले जाना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

स्वतंत्रता के बाद देश में घटे एक काले अध्याय का यह पटाक्षेप नहीं है। बहुत सारे मामले तो सबूतों के अभावों में बंद करने पड़े हैं। कुछ मामले अभी न्यायालय में चल रहे हैं। आशा है उन पर भी न्यायालय का फ़ैसला जल्दी आएगा। देश में आपात् स्थिति के बाद बल्कि उससे पहले ही पंजाब राज्य में घटनाक्रम ने ऐसा मोड़ लिया था जिससे देश के इस हिस्से में लंबे समय तक उग्रवाद और रक्तपात का एक नया अध्याय लिखा गया। 1972 में पंजाब में अकाली दल की हार के बाद कांग्रेस की सरकार बनी। तभी से पंजाब में आनंदपुर रेजोलूशन के अंतर्गत पंजाब के लिए स्वायत्तता की माँग की

जाने लगी जिसने आगे चल कर ख़ालिस्तान आंदोलन का रूप ले लिया। तद्पोरांत, ख़ालिस्तान की माँग ज़ोर पकड़ने लगी। इस आग में घी डालने का काम किया पाकिस्तान ने। इस समय तक पाकिस्तान का पूर्वी हिस्सा बंगलादेश बन चुका था। इसमें भारत की भूमिका के कारण पाकिस्तान भारत से बदला लेना चाहता था। उसने ख़ालिस्तान की माँग के लिए ऐसे तत्त्वों की हर प्रकार से मदद की कि 1984 तक आते आते पंजाब में रक्तपात और उग्रवाद की कई गंभीर घटनाएँ हो चुकी थीं। जरनेल सिंह भिंडरावाला, जो इस आंदोलन के शीर्ष पर आ गया था, ने स्वर्ण मंदिर में घुस कर वहीं अपना अड्डा बना लिया था। सरकार को समाचार मिल रहे थे कि पाकिस्तान की आई.एस.आई और यहाँ तक की अमरीका की सी.आई.ए ख़ालिस्तान आंदोलन को पूरी तरह समर्थन दे कर देश में हालात को ख़राब कर रही थी। रूस की के.जी.बी गुप्त एजेंसी से भारत को पता चला कि भिंडरवाला जल्दी ही पंजाब को भारत से अलग करने की घोषणा करने वाला है। अतः देश हित में सरकार के पास आपरेशन 'ब्लू स्टार' करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था। 1 जून, 1984 को भिंडरवाला सहित सभी सशस्त्र उग्रवादियों को स्वर्ण मंदिर से बाहर निकालने के लिए 'ब्लू स्टार' आपरेशन शुरू किया गया। इन लोगों ने सेना के समक्ष आत्मसमर्पण न कर युद्ध करना आरंभ कर दिया। 6 जून को भिंडरवाला मारा गया। स्वर्ण मंदिर खाली करवाने में सेना को भी बहुत बड़ी क़ीमत चुकानी पड़ी। इसमें सेना के 83 सैनिक शहीद हुए और 249 जख़्मी हुए थे। क्योंकि बाद में पता चला था कि स्वर्ण मंदिर के अंदर पाकिस्तान और चीन निर्मित अत्याधुनिक हथियार जमा कर लिए गए थे। आपरेशन 'ब्लू स्टार' में उग्रवादियों सहित कुछ तीर्थयात्री भी मारे गए थे क्योंकि उग्रवादियों ने तीर्थयात्रियों को अपने बचाव में ढाल की तरह इस्तेमाल किया था। ख़ालसा आंदोलन के दौरान उग्रवादियों ने कई हिंदुओं, निरंकारियों तथा सिखों को मौत के घाट उतार दिया था।

आपरेशन ब्लू स्टार से सिखों में नाराज़गी का माहौल बन गया। अंततः 31 अक्टूबर, 1984 को प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी की उन्हीं के दो सिख सुरक्षाकर्मियों ने हत्या कर दी जिससे पूरा देश सन्न रह गया था। देश में आपात् स्थिति लगाने के बावजूद इंदिरा गांधी एक लोकप्रिय नेता थीं। उनकी इस प्रकार हत्या से देश में शोक की लहर दौड़ गई। दिल्ली और देश के अन्य हिस्सों में सिखों पर हमले होने लगे। दिल्ली में ही 3000 से अधिक सिखों को ज़िंदा जला दिया गया। उस समय वास्तव में क़ानून व्यवस्था बिल्कुल विफल हो गई थी। केंद्र में कांग्रेस की सरकार थी और राजीव गांधी को प्रधान मंत्री बना दिया गया था। उस घड़ी में जाने अनजाने वह स्थिति पर नियंत्रण नहीं कर सके और कांग्रेस के नेताओं ने इन दंगों में बढ़ चढ़ कर भूमिका निभाई। यद्यपि इंदिरा गांधी के दो अपने

ही अंगरक्षक केहर सिंह और बेअंत सिंह ने इंदिरा गांधी की हत्या कर दी थी, उससे आक्रोश और क्रोध का वातावरण बनना स्वाभाविक था परंतु सरकार का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह हर नागरिक की सुरक्षा करें। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद उनका शव जब जनता के दर्शनों के लिए रखा गया तो मैंने भी जा कर उनके दर्शन किए थे किंतु जब वापस लौट रहे थे तो संध्या से ही चारों तरफ़ भयावह वातावरण बन चुका था। अफवाहों का बाज़ार गर्म था। मोती बाग के नगर निगम के अस्पताल में जब हम अपने एक बीमार रिश्तेदार को देख कर निकले तो उस समय यह अफ़वाह ज़ोरों से फैली हुई थी कि मोतीबाग गुरुद्वारे से हथियारबंद सरदार सब ओर रक्तपात कर रहे हैं। उस डर के माहौल में घर पहुँचने तक हमारा बुरा हाल था। उस रात पूरे समय शहर में भाग-दौड़ की आवाज़ें आ रही थी। मैंने पुलिस स्टेशन फ़ोन कर पूछा था कि यहाँ आर.के.पुरम की सड़कों पर क्या हो रहा है तो ज़वाब मिला था कि पूरी दिल्ली में यह सब हो रहा है। दूसरे दिन जगह जगह धुआँ नज़र आया था। यह शर्मनाक दंगे पूरे दिन चले। इस बारे में उच्च न्यायालय ने अपने फ़ैसले में यह टिप्पणी की है कि भारत विभाजन के समय हुए दंगों की तरह के यह दंगे थे। उसने फ़ैसले के आरंभ में ही यह टिप्पणी की हैं --

''न्यायालय का यह मत है कि दिल्ली और अन्य स्थानों पर इतने बड़े पैमाने पर सिखों की हत्याएँ वस्तुतः मानवता के विरुद्ध अपराध है। यह जघन्य अपराध लंबे समय तक समाज की आत्मा को कचोटते रहेंगे।''

मानवता के विरुद्ध अपराध की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए न्यायालय ने विश्व के कई काले अध्यायों का उल्लेख किया है जब इसी प्रकार के मानवता के विरुद्ध अपराध घटित हुए थे। ओटोमन प्रशासन की साँठ-गाँठ और सहायता से कुर्दों और तुर्कों के बड़े पैमाने पर अरमेनिया के लोगों के नरसिंहार के बारे में तीन देश रूस, ब्रिटेन और फ्रांस ने 28 मई, 1915 को पहली बार यह माना था यह कृत्य मानवता के विरुद्ध अपराध है और इस घोषणा में कहा गया है कि यह नरसंहार मानवता और सभ्यता के विरुद्ध अपराध है और इसके लिए तुर्की सरकार के सभी सदस्य तथा उनके एजेंट अपराधी माने जाएँगे। दूसरे विश्व-युद्ध के पश्चात् नाज़ी अपराधियों को दंड देने के लिए न्यूरेमबर्ग में बने अंतर्राष्ट्रीय सेना प्राधिकरण के चार्टर में यहूदियों के नर-संहार को मानवता के विरुद्ध अपराध की संज्ञा दी गई थी। इस प्रकार, भूतपूर्व यूगोस्लाविया और रवांडा के संबंध में गठित अंतर्राष्ट्रीय प्राधिकरणों की बात कहते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय ने विश्व के अन्य इसी प्रकार के मामलों का उल्लेख करते हुए बंगलादेश का भी उदाहरण दिया। बंगलादेश के उच्चतम न्यायालय ने अब्दुल कादर मौला मामले की सुनवाई के बारे में बताते हुए कहा कि 1971 में बंगलादेश के नागरिकों का पाकिस्तानी सेना के समर्थकों ने जो नरसंहार

किया था उसके अपराधियों को बरी करने के विरुद्ध सरकार ने बंगलादेश के उच्चतम न्यायालय में अपील की थी। इस मामले में भी मुकदमा 2009 में 38 वर्षों के लंबे अरसे बाद शुरू हुआ था और उस पर फ़ैसला 2013 में हुआ था। इसी प्रकार, दिल्ली उच्च न्यायालय ने कहा कि रोम संविधि के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय अपराधिक न्यायालय की स्थापना की गई थी। इसी के अनुच्छेद 7 में मानवता के विरुद्ध अपराधों की परिभाषा दी गई जिसमें किसी नागरिक जनसंख्या पर बड़े पैमाने पर या सुनियोजित ढंग से आक्रमण सहित हत्या, विध्वंस, उत्पीड़न, यातना, बलात्कार तथा इसी प्रकार के अन्य अपराध शामिल हैं।

इस प्रकार उच्च न्यायालय ने विश्व में मानवता के विरुद्ध हुए अपराधों के मामलों का उल्लेख कर यह कहा कि भारत विभाजन के समय हुई दंगों की विभीषिका के बाद 1984 के दंगे तो मानवता के विरुद्ध अपराध था ही, इसके साथ ही 1993 में मुंबई, 2002 में गुजरात और 2013 में मुजफ्फरनगर में हुए दंगे भी इसी श्रेणी के अपराध के अंतर्गत आते हैं। इन नागरिकों के विरुद्ध किए गए यह अपराध सामान्य प्रकार के नहीं हैं बल्कि इन्हें सुनियोजित ढंग से योजना बना कर कारित किया गया था। पहले इस प्रकार के अपराधों को सशस्त्र युद्धों के अंतर्गत माना जाता था परंतु अंतर्राष्ट्रीय विधिक विकास के कारण अब इन्हें ऐसा नहीं माना जाता। मानवता के विरुद्ध अपराध अब युद्ध के समय नहीं, बल्कि शांति के समय भी होने लगे हैं। किंतु भारत में इस संबंध में अभी भी कोई पुख़्ता क़ानून नहीं हैं जिसके अंतर्गत ऐसे अपराधों से शीघ्रता से निपटा जाए। इसलिए उच्च न्यायालय ने कहा हैं कि मानवता के विरुद्ध अपराधों और नरसंहार जैसे जघन्य अपराधों से निपटने के लिए देश की विधि व्यवस्था को मज़बूत करने के लिए एक अलग से क़ानून बनाया जाए। भारत में किसी न्यायालय ने पहली बार इस तरह का सुझाव दिया है। इस फ़ैसले को ध्यान में रख कर क़ानून निर्माताओं को इस बारे में शीघ्र ही ध्यान देने की आवश्यकता है।

इन मामलों में देरी का कारण यह था कि अपराधी सत्ता दल से थे। पुलिस ने इसमें षड्यंत्रकारी का रवैया अपनाते हुए कई प्रकार के हथकंडे अपना कर उन्हें ख़ारिज करने का प्रयास किया। 2014 में केंद्र सरकार के स्तर पर आए परिवर्तन के बाद जाँच आयोग नये सिरे से बिठाए गए जिसकी सिफ़ारिश पर नए सिरे से मुकदमे आरंभ किए गए हैं। अभी भी कई मुकदमों पर सुनवाई चल रही हैं। उच्च न्यायालय ने यह भी कहा है कि इस समय वैश्विक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय विधि आयोग मानवता के विरुद्ध अपराधों के संबंध में एक संधि का प्रारूप तैयार कर रहा हैं। भारत अपने यहाँ बार बार घटित इस प्रकार की घटनाओं के अनुभव को ध्यान में रख कर इस कार्य में अपनी रचनात्मक भूमिका निभा सकता हैं। यद्यपि भारत नरसंहार संधि पर अपने हस्ताक्षर कर चुका है और उसकी पुष्टि

कर चुका है। परंतु 2002 में संसद में जब यह मुद्दा उठा था सरकार की तरफ़ से कहा गया था कि भारत में विद्यमान क़ानून इस प्रकार की स्थितियों से निपटने के लिए पर्याप्त हैं। क़ानूनी रूप से इस बात को सही नहीं ठहराया जा सकता हैं। भारत को अंतर्राष्ट्रीय दिशा निर्देशों के अनुसार अपने विद्यमान क़ानूनों के अलावा अलग से क़ानून बनाने की आवश्यकता है जिसके लिए दिल्ली उच्च न्यायालय ने निर्देश दिया है।

सिख दंगों के अपराधियों के मामले में न्याय में हुई देरी के कारण तथा वैसे भी न्यायालयों में न्याय मिलने में लगने वाले समय के कारण किन्हीं लोगों का विश्वास न्याय व्यवस्था में डगमगा रहा हैं। इधर कुछ वर्षों में कुछ लोग सड़कों पर उतर लिचिंग का अपराध करने लगते हैं जो कि न तो न्याय व्यवस्था में आस्था को ले कर उपयुक्त हैं और न ही देश में विधि व्यवस्था बनाए रखने के लिए। जब तक देश की विधि व्यवस्था और न्याय व्यवस्था को चुस्त-दुरस्त नहीं किया जाता, देश कितनी भी आर्थिक तरक्की कर ले उसे सही अर्थों में तरक्की नहीं कहा जा सकता। इस समय देश में संयम और अनुशासन की भावना का संचार करना अत्यावश्यक हो गया है। अव्यवस्था आर्थिक कारणों से भी फैलती हैं। विश्व में और भारत में उदारवाद, बाज़ारवाद और पूँजीवाद के चलते आर्थिक विषमताएँ बहुत बढ़ती जा रही हैं जबकि भारत के संविधान के भाग चार में नीति-निर्देशक तत्त्वों में एक महत्त्वपूर्ण नीति-निर्देशक तत्त्व हैं कि व्यवस्था ऐसी हो कि देश के संसाधन कुछ ही हाथों में सिमट कर न रह जाए। जो भी सरकार हो और नेतृत्व हो उसे इन बढ़ती असमानताओं को दूर करने का वातावरण पैदा करने के परिवेश पर पूरा ध्यान दे कर ऐसी नीतियाँ बनानी होंगी कि देश में समरसता और समन्वय का वातावरण बने वरनः तो देश में कारण-अकारण अव्यवस्था फैलने को रोका नहीं जा सकेगा। वह अव्यवस्था लिचिंग के रूप में हो सकती है, दंगों के रूप में या फिर आंतरिक और बाह्य षड्यंत्रों के चलते ऐसी घटनाओं में परिणित हो सकती है। हम रक्तपात और नरसंहार और मानवता के विरुद्ध अपराधों के लिए परिभाषाएँ ही ढूँढ़ते रह जाएँगे।

❑

डॉ. एस.एस. दास एवं कीर्तिका सिंह

भारतवर्ष में सांस्कृतिक विविधता एवं एक समान नागरिक संहिता : विश्लेषण एवं संभावनाएँ

भारतवर्ष में सांस्कृतिक विविधता होने के कारण प्राचीन समय से विविध संस्कृतियों का समुचित विकास हुआ एवं उन्हें समुचित स्वायत्तता भी दी गई, परंतु जैसे-जैसे विश्व में विधि के शासन की स्थापना सुनिश्चित होती गई, विधियों में भी एकरूपता आती चली गई। प्रायः सांविधानिक, नागरिक, दांडिक एवं प्रशासनिक विधियों में एकरूपता प्रत्येक देश में पाई जाती है अन्यथा शासन व्यवस्था सुनिश्चित नहीं की जा सकती है। भारत ने भी उक्त एकरूपता को अपनाया एवं भारतीयों ने भी इसे सहर्ष स्वीकार किया। परंतु कुछ धार्मिक प्रथाओं को स्वायत्तता देते हुए विवाह, संरक्षकता, विवाह विच्छेद, उत्तराधिकार एवं संयुक्त परिवार आदि के संबंध में स्वीय विधियों को प्राथमिकता दी गई। भारतीय स्वीय विधि को सामान्यतः हिंदू विधि (जो कि हिंदू, सिक्ख, बौद्ध, जैन, वीरशैव एवं लिंगायत पर लागू होती है), मुसलमान विधि (मुस्लिम के लिए), पारसी विधि (पारसियों के लिए), ईसाई विधि (ईसाईयों के लिए) में विभक्त किया जा सकता है। इन सभी समुदायों को अपनी स्वीय विधियों के अनुसार वैवाहिक एवं अन्य कार्यक्रम संपन्न कराने की स्वतंत्रता दी गई, जबकि कुछ स्वीय विधियों के प्रावधान हमारे संवैधानिक व्यवस्था को भी चुनौती देते हैं, परंतु स्वतंत्रता के 72 वर्ष पूर्ण होने पर भी न तो स्वीय विधियों को संबंधित समुदायों द्वारा ही सुधारा गया है, न तो शासन ने ही पर्याप्त क़दम उठाए हैं।

प्रत्येक विधि सदैव विकासशील होती है एवं सामाजिक परिवर्तन एवं आवश्यकता के अनुरूप अपना स्वरूप बदल लेती है। परंतु भारतीय समाज इस संबंध में आज भी रुढ़िवादी बना हुआ है विशेषकर विधि निर्मातागण एवं शासक वर्ग। हालाँकि हमारे संविधान निर्माताओं ने इस संबंध में अनुच्छेद 44 में व्यवस्था दे रखी है जो कि एक बाध्यकारी लक्ष्य के रूप में है जिसका क्रियान्वयन पर्याप्त सामाजिक जागरुकता एवं समरसता के

द्वारा किया जाना चाहिए था। कुछ क़दम स्वतंत्रता के पूर्व एवं बाद में भी उठाए गए जिसमें कुछ बाध्यकारी हैं एवं कुछ वैकल्पिक। उदाहरणार्थ हिंदू कोड बिल के द्वारा हिंदू समुदाय विशेष के लिए एकरूप प्रावधान बनाए गए जिसमें कुछ हिंदू स्वीय विधि के विरोधाभासी होने पर भी कालांतर में स्वीकार कर लिए गए। विवाह विच्छेद, अंतर्जातीय विवाह आदि व्यवस्था को समाप्त किया गया लेकिन इसको लेकर कोई प्रबल विद्रोह देखने को नहीं मिला। दूसरा उदाहरण, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (Indian Succession Act) है जो कि ईसाई, पारसी एवं यहूदियों आदि के लिए वैकल्पिक व्यवस्था देता है। इसे स्वतंत्रता के पूर्व ही स्वीकार कर लिया गया था। इसका सफलतापूर्वक क्रियान्वयन हुआ एवं उक्त समुदायों के लिए पूर्णरूप से प्रचलित भी है। विशेष विवाह अधिनियम, 1954 भी एक सफल उदाहरण है जो धार्मिकोत्तर वैवाहिक संबंध को संरक्षित करता है एवं वैवाहिक स्वीय प्रावधानों में विपरीतता होते हुए भी एकरूपता लाता है। बौद्धिक वर्ग इन विधियों का पर्याप्त उपयोग कर रहे हैं।

धार्मिक स्वतंत्रता के नाम पर कुछ समुदाय आज भी समान नागरिक संहिता के निर्माण एवं क्रियान्वयन पर जनसामान्य को सशंकित करते हैं। सांस्कृतिक विविधता को दूसरा सबसे बड़ा कारण बताया जाता है। परंतु विविधता को बनाए रखते हुए भी प्रमुख मुद्दों पर एकरूप संहिता बनाई जा सकती है। विविधता यदि संवैधानिक है तो उसका संरक्षण अवश्य किया जाना चाहिए। लेकिन विविधता के नाम पर मूलभूत संवैधानिक मान्यताओं की हत्या का प्रयास नहीं करना चाहिए।

धार्मिक स्वतंत्रता को संविधान में सुरक्षित किया गया है परंतु यह अत्यांतिक नहीं है, कुछ दायित्वों के अधीन ही धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार क्रियान्वित किया जा सकता है।

समान नागरिक संहिता के मार्ग में प्रमुख बाधाएँ : भारत में जो समूह समान नागरिक संहिता के क्रियान्वयन के विरोध में मत व्यक्त करते हैं वे सांस्कृतिक विविधता, हिंदू कोड विल का भय एवं धार्मिक स्वतंत्रता के पतन की संभावना को प्रमुख कारण मानते हैं। अतः उक्त विषयों का बिंदुवार अध्ययन करना आवश्यक है।

सांस्कृतिक विविधता एवं समान नागरिक संहिता : इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि जिस देश में सांस्कृतिक विविधता विद्यमान होती है उन देशों में प्रायः अल्पसंख्यक समुदायों में उनके अस्तित्व को नष्ट होने का भय बना रहता है वह चाहे धार्मिक अल्पसंख्यक हो या भाषायी अल्पसंख्यक। यह एक पृथक् स्वतंत्र विचार है जिस पर मनन होना आवश्यक है क्योंकि व्यवहारिक रूप से बहुसंख्यक समुदाय प्रायः साशय या अनजाने में अल्पसंख्यक वर्ग को उपेक्षित करते रहते हैं। उनको उनकी दयनीय स्थिति का एहसास भी कराते रहते हैं। उनकी भाषा, पोशाक एवं खानपान को लेकर टिप्पणियाँ हुआ करती हैं। भारतवर्ष भी इससे

कभी अछूता नहीं रहा। दूसरे की सांस्कृतिक विरासत को सँजोना प्रायः अध्ययन का ही विषय रहा है। वर्तमान समय में भी साँझी विरासत का वास्तविक प्रसार करना कठिन चुनौती है। परंतु यह असंभव इस वजह से भी नहीं है क्योंकि हमारी जड़ों में 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना निहित रही है। हमने आक्रांताओं को भी उदार बना डाला है। उन्हें भी अपनी संस्कृति में रचा बसा लिया है। हमारे खान-पान एवं पोशाक में चाहे ही भिन्नता रही हो परंतु मूल धारणा एवं विश्वास में कभी भी विरोधाभास नहीं रहा है। हमने सदैव वैचारिक मनन (न कि विरोध) करके सैकड़ों रास्तों का आविष्कार किया है जो कि एक ही लक्ष्य की ओर उन्मुख होता है। एक ही पथ या स्वाद कभी-कभी रूढ़ात्मक हो जाता है। शायद इसी वजह से हमारे पूर्वजों ने प्रत्येक क्षेत्र में विविधता का उन्नयन किया। साथ ही भारतवर्ष की भौगोलिक प्रकृति भी विविधता को सदैव पोषण करती रहती है। परंतु पिछली एक सदी में इसी विविधता को राजनैतिक विश्लेषकों के द्वारा घातक बताया गया है जिससे उनके स्वार्थ की पूर्ति होती रहे, जिस विविधता को ही हथियार बनाकर हमने कभी मुगलों, तुर्कों की प्रकृति को ही बदल डाला और उन्हें भारतवर्ष की संस्कृति में घोल दिया। अंग्रेज़ों ने उसी विविधता को छिन्न-भिन्न करने का पूर्ण प्रयास किया और इस उपमहाद्वीप को भौगोलिक प्रकृति के विरुद्ध विभाजित कर दिया जिसका दुष्परिणाम हम आज तक भोग रहे हैं जबकि प्रत्येक भारतीय इस अनुभव से भली-भाँति परिचित हैं। हमें होली, ईद, दीपावली, बड़ा दिन आदि साथ-साथ मनाने में ही उन्मुक्त आनंद आता है। इस आनंद गंगा में सभी स्नान कर चुके हैं, और करते भी हैं। फिर भी पता नहीं क्यों, किस कुचक्र में फँसते जा रहे हैं। किसी भी कुचक्र या भँवर से निकलने का एक ही रास्ता होता है कि अपने आप को शिथिल कर दें, अर्थात् स्वयं को उदार बना दें। हमें भी संभावित भविष्य को सुखद बनाने के लिए ऐसा ही करना पड़ेगा।

समान नागरिक संहिता का शनैः शनैः क्रियान्वयन : चूँकि समान नागरिक संहिता सदियों से विकसित विभिन्न कुरीतियों में परिवर्तन लाएगी एवं सुरीतियों को एकरूप में मान्यता प्रदान कराएगी अर्थात् सामाजिक मान्यताओं में परिवर्तन! जो कि सदैव मंद गति से ही संभव हो सकता है। तभी इसमें स्थायित्व रहेगा। हालाँकि बिट्रिश शासन ने ही सर्वाधिक सांस्कृतिक, धार्मिक विरासत पर प्रहार किया, परंतु इस बात से इनकार भी नहीं किया जा सकता कि उन्होंने हमारे कुछ सामाजिक सुधारकों से प्रभावित होकर नए-नए विधान भी बनाए जिन्होंने कुरीतियों पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया एवं वर्तमान रीतियों में न्यायिक समानता स्थापित्य करने का प्रयास किया। वह चाहे विधवा विवाह, महिला संपत्ति अधिकार, बाल-विवाह, उदार भरण पोषण क़ानून, अंतर्जातीय एवं अंतर धार्मिक विवाहों को मान्यता एवं उत्तराधिकार क़ानूनों का उचित अर्थान्वयन किया। इन सारी वैयक्तिक विधियों के क्षेत्रों में जैसा कि तत्कालीन विश्व में भी सुधार हो रहा था, भारत को इससे वे अछूता

नहीं रख पाए। बिट्रिश न्यायपालिका एवं विधायिका दोनों ने इस क्षेत्र में अग्रणी क़दम उठाए। जिन्हें स्वीकार करते हुए ही विभिन्न हिंदुओं विधियों को परिमार्जित करके, सुधारात्मक प्रावधानों के साथ पास किया गया जिसको लेकर भारतीय समाज ने प्रबल विरोध नहीं किया। मुस्लिम समुदाय के संबंध में भी बिट्रिश सरकार ने प्रयास प्रारंभ कर दिया था। मुस्लिम वैयक्तिक विधि (शरियत) क्रियान्वयन अधिनियम, 1937, The Dissolution of Muslim Marriage Act, 1939 एवं बहुत सारे न्यायिक निर्वचन के द्वारा वैयक्तिक विधि का सार्थक रूप स्वीकार करना, आदि उदाहरण है। स्पष्ट रूप से नागरिक संहिता की तरफ़ पहला प्रयास The Lex Loci Report में उल्लिखित किया गया जो कि प्रथम विधि आयोग, 1833 की विधि के संहिताकरण के संबंध सबसे महत्त्वपूर्ण रिपोर्ट थी। परंतु इससे भी पूर्व The Bengal Sati Regulation, 1829 पास किया गया था जिसको समान नागरिक संहिता की दिशा में प्रथम सद्भावनापूर्ण सार्थक प्रयास भारत के संदर्भ में माना जाना चाहिए। इसके पश्चात्, सामाजिक परिवर्तन ने यात्रा प्रारंभ कर दी थी, चाहे जो भी सरकारें रही हों स्वतंत्र या परतंत्र परंतु सभी को धीरे-धीरे सामाजिक चेनता को स्वीकार करना पड़ा। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1865, भारतीय विवाह अधिनियम, 1864, हिंदू विधवा विवाह अधिनियम, 1856, वैवाहिक महिला संपत्ति अधिनियम, 1923 हिंदू दाय Removal of Disabilities अधिनियम, 1925, The Christian Marriage Act,1872, हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 (इसी के पश्चात् बी.एन. राव समिति का निर्माण हुआ, समिति ने इस अधिनियम पर पुनर्विचार करके प्रथम बार '*एक समान नागरिक संहिता : विवाह एवं उत्तराधिकार*' की आवश्यकता 1957 में व्यक्त की थी, पुनः 1944 में समिति का गठन हुआ, जिसमें 1947 में भारतीय संसद को रिपोर्ट प्रेषित की), विशेष विवाह अधिनियम, 1872; विशेष विवाह (संशोधन) अधिनियम 1923; आदि परतंत्र भारत के प्रयास थे।

स्वतंत्र भारत में समान नागरिक संहिता की दिशा में प्रयास : आज़ादी के बाद भी उक्त रिपोर्ट के आधार पर हिंदू विधि समिति (1948-1951 एवं 1951-1954) का निर्माण हुआ; जिसके अंतर्गत हिंदू कोड बिल का निर्माण किया गया जो कि समान नागरिक संहिता की दिशा में एक बहुत सार्थक प्रयास रहा। इसके माध्यम, हिंदू समुदाय के विविध वैवाहिक, दत्तक, उत्तराधिकार, भरण पोषण एवं संरक्षकता आदि नियमों में एकरूपता लाने का प्रयास किया गया। हिंदू विवाह अधिनियम 1955, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956, हिंदू अवयस्कता एवं संरक्षकता अधिनियम 1956, हिंदू दत्तक ग्रहण एवं भरण पोषण अधिनियम पास किए। साथ ही संविधान सभा द्वारा समितियों की रिपोर्ट की विवेचना करते हुए एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में अनुच्छेद 44 को भारतीय संविधान में स्थापित किया गया कि केंद्र एवं राज्य सरकार इस ओर सदैव प्रयत्नशील रहेगी। राजकुमारी अमृत कौर, हंसा मेहता

आदि का सराहनीय योगदान उक्त प्रावधानों के निर्माण में रहा जो कि प्रदर्शित करता है कि नारी शक्ति समान नागरिक संहिता के निर्माण में The All Indian Women's Conference 1933 (श्रीमती लक्ष्मी मेनन) के समय से ही प्रमुख रूप से सक्रिय रही हैं।

भारत की विविधतापूर्ण संस्कृति एवं साँझी विरासत को ध्यान में रखते हुए पूर्व ब्रिटिश विधान की जगह एक नया विधान *'विशेष विवाह अधिनियम 1954'* पास किया गया, जो कि समान नागरिक संहिता की यात्रा में मील का पत्थर साबित हुआ। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का निर्वचन शाहबानो के मामले में एक नया मोड लाता है। इसके बाद समान नागरिक संहिता की दिशा में सार्थक प्रयास की जगह राजनीतिक प्रयास ने ले ली। वह चाहे Muslim Women's (Protection of Right on Divorce) Act 1986, हो या तीन तलाक़ अध्यादेश 2018 हो। परंतु उक्त व्याख्यान से यह तो साबित ही होता है कि भारतीय समाज समान नागरिक संहिता की प्राप्ति की ओर शनैः-शनैः प्रयत्नशील रहा है और है।

आदर्श समान नागरिक संहिता, गोवा राज्य : एक मूल्यांकन एवं समानता : गोवा में The Portuguese Civil Code सन 1867 से स्थापित विधि रहा है जो धर्म, जाति एवं लिंग को देखे बिना समान रूप से सभी वर्गों को एकरूप पारिवारिक विधि उपलब्ध कराता रहा है। गोवा का भारत में 1961 में समागमन हुआ। इसी के पश्चात्, भारतीय संसद ने The Goa, Daman and Diu Administration Act, 1962 के द्वारा The Portuguese Civil Code 1867 को गोवा के लिए अधिकृत कर दिया। क्योंकि गोवा का जन समुदाय उक्त विधि के अनुरूप विगत 200 वर्षों में स्वयं को ढाल चुका था। इसी कारण भारतीय संसद को उसे स्वीकार करने की विवशता भी थी। जनतंत्र में जनशक्ति के विरुद्ध जाना भी तो संभव नहीं है। इसी वजह से *गोवा समान नागरिक संहिता* भारत में प्रचलित अन्य पारिवारिक विधियों का अपवाद है। गोवा के नागरिक चाहे किसी भी धर्म, जाति या लिंग के हों, उन पर अन्य प्रचलित विधि क्रियान्वित नहीं की जा सकती। भारत ने गोवा में प्राचीन *पुर्तगाली सिविल नागरिक संहिता* को इस प्रकार अभी भी जीवित रखा है जबकि पुर्तगाल ने प्राचीन संहिता को नई The Portuguse Civil Code 1966 से हस्तांतरित कर दिया। भारत में गोवा के सम्मिलित होने के बाद मुस्लिम संगठनों ने वहाँ पर शरियत विधि के क्रियान्वयन की आवाज़ उठाई थी। तथानुरूप भारत सरकार ने 1981 में वैयक्तिक विधि समिति (Personal Law Committee) का गठन किया परंतु गोवा के जागरुक संगठनों यथा The Muslim Youth Welfare Association और The Goa Muslim Women's Association के विरोध के कारण उसे स्थगित करना पड़ा जिसके कारण गोवा की एकरूपता बनी रह सकी।

अब अगर हम गोवा में क्रियान्वित पारिवारिक विधि की तुलना भारत सरकार के अन्य क्षेत्रों से करें तो कुछ समानताएँ स्वीकार्य हो सकती हैं, परंतु असमानताएँ भी विद्यमान हैं क्योंकि पुर्तगाली सभ्यता एवं भारतीय सभ्यता में भी विरोधाभास है। लेकिन बाकी भारतीय परिक्षेत्र विगत वर्षों में छोटे-छोटे विधायी संशोधनों एवं न्यायिक निर्वचनों द्वारा प्रगतिशील बना रहा है। महिला सशक्तिकरण को लेकर भी काफ़ी काम हुआ है। सबसे बड़ा विरोधाभास यही है कि अन्य भारतीय क्षेत्र अभी तक पितृसत्तात्मक विचारधारा से स्वयं को मुक्त नहीं कर सके हैं जो कि विभिन्न विधानों में दिग्दर्शित होता है जबकि गोवा के समान नागरिक संहिता की यही सबसे बड़ी विशेषता है कि वह मातृसत्तामक केंद्रित रही है। वैवाहिक दंपती संयुक्त रूप से सभी प्रकार की संपत्ति पर समान अधिकार रखते हैं। विवाह-विच्छेद पर दोनों आधी-आधी संपत्ति पर अधिकार ग्रहण कर सकते हैं। विवाह पूर्व संपत्ति पर, विवाह पश्चात् दंपति एकल अधिकार भी रख सकते हैं। The Anti Nuptial Agreement के द्वारा दंपति सकल एवं संयुक्त अधिकार का निर्धारण कर सकते हैं जो कि वर्तमान समस्त भारतीय स्थिति के लिए आदर्श हो सकता है क्योंकि यह विचारधारा पितृसत्तात्मक समाज की जड़ ही नष्ट कर देगी। दूसरी विशेषता यह है कि, माँ-बाप अपनी संतानों को संपत्ति को उत्तराधिकार में प्राप्त करने से पूर्णरूप से वंचित नहीं कर सकते है। उन्हें संपूर्ण संपत्ति का आधा भाग संतानों के लिए रखना पड़ेगा जिसमें कि प्रत्येक अपने भाग के अनुसार स्वामित्व ग्रहण कर सकता है। **अन्य विशेषता जो कि बाकी भारतीय परिक्षेत्र के लिए विरोधाभास का प्रमुख कारण बन सकती है, वह यह कि गोवा में कोई भी मुस्लिम व्यक्ति एक विवाह से अधिक नहीं कर सकता, न ही मौखिक तलाक़ दे सकता है।**

उपर्युक्त विरोधाभास के अलावा बहुत कुछ समानताएँ हैं। जो कि प्राचीन भारतीय प्रचलन को दृष्टिगत रखते हुए गोवा में स्वीकार्य की गई जिसमें कुछ वर्तमान परिदृश्य में अनावश्यक भी है, जैसे हिंदुओं को द्वि-विवाह की स्वीकृति विशेष परिस्थितियों में है, The Code of Usages and Customs of Gentic Hindus of Goa, में पत्नी जिसको 25 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् भी संतान उत्पत्ति नहीं हुई या कि 30 वर्ष की आयु तक पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई। यह विशेषाधिकार अन्य समुदाय को प्राप्त नहीं है। इस संदर्भ में मेरा मानना है कि शेष भारतीय क्षेत्र अधिक सुधारात्मक विधि स्वीकार कर चुका है। दूसरी समानता है कि गोवा में विवाह पंजीकरण ही एक मात्र वैवाहिक साक्ष्य माना जाता है। भारत के अन्य क्षेत्र में भी वैवाहिक पंजीकरण के विवाह प्रावधान भिन्न-भिन्न विधियों एवं राज्य सरकार की अधिसूचनाओं द्वारा प्रचलित किए गए हैं, जिन्हें प्रायः वर्तमान शैक्षिक वर्ग स्वीकार कर रहा है। परंतु वैवाहिक समारोह आज भी प्राथमिकता के तौर पर प्रचलित है अर्थात् द्वि-पद्धति का अवलोकन सामान्य रूप से किया जा सकता है। इस

संदर्भ में गोवा में भी रोमन कैथोलिक को चर्च में विवाह करने का विशेषाधिकार दिया जाता है यदि वे Civil Registrar से NOC लाकर दे देते है। तीसरी समानता का प्रचलन यह है कि गोवा में हिंदुओं में भी विवाह विच्छेद का प्रचलन 1867 से ही रहा है, परंतु केवल व्यभिचार के मामले में ही। विवाह विच्छेद की यह विधि हिंदू कोड बिल के द्वारा भारत के अन्य क्षेत्र में भी पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी है।

परंतु गोवा में भी अधर्मज संतान एवं दत्तक ग्रहण को लेकर असमानताएँ हैं। जैसा कि भारत के अन्य क्षेत्रों में भी कुरीतियाँ विद्यमान हैं। आख़िरकार यह कहा जा सकता है कि गोवा के परिदृश्य को देखते हुए एवं स्वतंत्रता के बाद के अन्य वैधानिक विकास को लक्षित करते हुए एक समान नागरिक संहिता न ही असंभव लक्ष्य है, न ही यह समाज के मूलरूप को ध्वस्त कर सकती है। बीजारोपण कई दशकों पूर्व ही हो चुका है।

सायरा बानो वाद एवं तीन तलाक़ अध्यादेश : एक उभरती आशा : तत्कालीन सायरा बानो वाद का निर्णय एक नई पहल प्रतीत होती है। उसके बाद केंद्र सरकार द्वारा उक्त निर्णय की संस्तुति स्वरूप अध्यादेश लाकर तीन तलाक़ को अवैध घोषित करना समान नागरिक संहिता की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण क़दम है। केंद्र सरकार द्वारा लाया गया अध्यादेश उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित किए गये निर्णय के कई महीनों बाद अस्तित्व में आया। ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि ऐसा संभवतः समुदाय विशेष द्वारा विरोध के प्रभाव का मूल्यांकन करना रहा होगा। जब केंद्र सरकार ने विरोध की मात्रा नगण्य देखी, तब अध्यादेश पारित कर दिया। पुनः अध्यादेश को न्यायालय में चुनौती दी गई, जिसको मुख्य न्यायाधीश रंजन गोगाई ने प्रथम दृष्टया ही स्वीकार करने से मना कर दिया। अब यह कि यहाँ पर में एक तुलनात्मक अध्ययन शाहबानो एवं सायराबानो वाद के वीच प्रस्तुत करना चाहूँगा। शाहबानो वाद (मुस्लिम महिला भरण-पोषण) के निर्णय के पश्चात् संपूर्ण भारत में विरोध की सशक्त लहर थी जिसको दृष्टिगत रखते हुए भारतीय संसद को मुस्लिम महिला (विवाह विच्छेद अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 पारित करना पड़ा। जो कि मुस्लिम समुदाय के विरोध के कारण पारित हुआ। इसके विपरीत, सायराबानो वाद के पश्चात् विरोध की मात्रा नगण्य थी और निर्णय को सशक्त करने वाला अध्यादेश सरकार द्वारा पारित किया गया। संभवतः सायरा बानो निर्णय के पश्चात् एवं अध्यादेश के मध्य जो समयांतराल था, वह विरोध के भय को दर्शाता है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि शाहबानो वाद का निर्णय, 1985 में दिया गया और सायरा बानो वाद का निर्णय 2017 में हुआ। इन 32 वर्षों में भारतीय समाज में ज़मीनी स्तर पर बहुत परिवर्तन आ चुका हैं। भारतीय समाज सकारात्मक सोच से ओत-प्रोत है। वह रूढ़िवादी, बर्बर प्रथाओं का त्याग करने के लिए पूर्ण तैयार हो चुका है, या कि यह कहना उचित होगा कि उक्त निर्णय मात्र एक उद्घोषणा ही थी।

मुस्लिम समुदाय का बहुसंख्यक वर्ग इन प्रथाओं का त्याग कर चुका था और यह भी समझ चुका है कि वह मूल प्रथाएँ नही हैं। इनका अवतरण बाद में किंचित् मात्र व्यक्तियों ने किया। इसी कारण उक्त वाद का सशक्त विरोध नहीं किया गया। फलस्वरूप, एक वर्ष परिस्थितियों का विश्लेषण करने के पश्चात् 2018 में केंद्र सरकार तीन तलाक़ को प्रतिबंधित करते हुए अध्यादेश ला सकी।

तात्पर्य यह है कि सभी भारतीय समुदाय धर्म, जाति, रंगभेद एवं लिंग आदि भेदभावों से परे एक विकसित सभ्यता एवं मानसिकता का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जो कि दर्शाता है कि समान नागरिक संहिता की दिशा में अभिनव क़दम उठाने का समय आ चुका है। न केवल भारतवर्ष परंतु विश्व समुदाय एक साँझी संस्कृति की तरफ़ क़दम उठा चुका है। अब सरकारी क्षेत्रों एवं विधायी संस्थाओं को एक जागरुक एवं सद्भावनापूर्ण माहौल बनाते हुए बची-खुची पारिवारिक विभिन्नताओं को समाप्त करने की ओर क़दम बढ़ाना चाहिए। परंतु सावधानी पूर्वक। सभी समुदायों की मूल संस्कृति जीवित रहनी चाहिए। इसलिए एक ही अधिनियम में कुछ पृथक्-पृथक् अध्याय हों, जो कि सांस्कृतिक, धार्मिक स्वतंत्रता को भी बलिष्ठ कर सकें, जिससे कोई समुदाय विशेष आहत न महसूस कर पाए।

एक समान नागरिक संहिता की मूल धारणा न हिंदू विधि, न ही क्रिश्चियन विधि, न ही पारसी विधि और न ही मुस्लिम विधि आदि की पक्षपातपूर्ण सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए। बल्कि यह सम्पूर्ण रूप से एक भारतीय विधि होनी चाहिए जिसमें कि उपर्युक्त प्रत्येक विधि के उत्कृष्ट सिद्धांतों का समायोजन हो और प्रत्येक समुदाय अपने को इस विधि में समाहित, सुरक्षित एवं गौरवान्वित महसूस कर सके। इस प्रक्रिया के मूर्त रूप लेने में सभी समुदायों के विद्वत् वर्ग की सहमति होनी चाहिए। सभी वैयक्तिक विधियों के प्रकांड विद्वानों की एक समिति बनाई जानी चाहिए जो कि सभी संभावनाओं एवं दुष्परिणामों पर पुनर्विलोकन कर सके। सामान्य सिद्धांतों एवं मान्यताओं को चिह्नित करके उनमें अनावश्यक भेदों के बारे में जन चेतना पैदा कर सके। तुर्की आदि देशों में प्रचलित समान संहिता के सिद्धांत जो कि भारतीय संस्कृति के अनुरूप हो, उनका अध्ययन करे। उनको स्वीकार करने की संभावनाओं का परीक्षण करे। गोवा में प्रचलित समान नागरिक संहिता को एक आदर्श के रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

❑

संदर्भ

1. Mary E. John, Feminism in India and the West: Recasting a Relationship, 10 Cultural Dynamics 197, 201(1998)
2. Emanuel Nahar, Minority Rights in India: Christian Experience and Apprehensions, Mainstream Weekly (April 24, 2007)

3. F.E. Noronha, Understanding the Common Civil Code: An Introduction to Civil Law, 141-142(A.I.R. Nagpur)
4. Grainne DeBurca, The Constitutional Challenge of New Governance in the European Union, 28 Eur. L. Rev. 814, (2003)
5. H.M. Seervai, Constitutional Law of India: A Critical Commentary (4th ed. Universal Book Traders, 1991
6. Alon Liel, Turkey: The Miltary, Islam and Politics (1999)
7. Nistha Desai, Goa Code has Meshed well with Muslim Culture, Times of India (29th April,1997, New Delhi)
8. Robert Hardgrave Jr., India : The Dilemmas of Diversity, 4(4) J. Democracy 54, (Oct.1993)
9. Charles F. Andrews, Mahatma Gandhi: His Life and Ideas (2010)
10. All India Muslim Personal Law Board, The Milli Gazette Online, Feb.16-28, 2005
11. Madhavi Sunder, Piercing the Veil, 112 Yalr.L.J. 1427 (2003)
12. Kiran Deshta, Uniform Civil Code: In Retrospect and Prospect (2002)
13. Anwar Alam, 'Scholarly Islam' and 'Everyday Islam': Reflection on the Debate over Integration of the Muslim Minority in India and Western Europe, 27(2) J.Muslim Minority Aff. 241 n. 9(2007)
14. Sumit Ganguly, The Crisis of Indian Secularism, 14(4) J.Democracy 11, (2003)
15. Partha Ghosh, The Politics of Personal Law in South Asia: Identity, Nationalism and The Uniform Civil Code (2007)
16. Dr. Satyarajan Purushottam Sathe, Uniform Civil Code: *Implications of Supreme Court Intervention*, XXX(35) Economic and Political Weekly 2165 (Sep.2, 1995)
17. Abdul Rehman Undre v. Padma Abdul Rehman Undre, AIR 1982 Bom. 341
18. Ms. Jordan Diengdeh vs. S.S. Chopra AIR 1985 SC 935
19. Sarla Mudgal, President, ... vs Union Of India**,** 1995 AIR 1531
20. Budansa vs. Fatima 1914 IC 697
21. Gul Mohammed v. Emperor AIR 1947 Nagpur 121
22. Ram Prasad v. state of U.P., A.I.R. 1957 All. 411
23. Mohd. Ahmed Khan vs. Shah Bano Begum AIR 1985 SC 945
24. Pannalal Bansilal v. State Of Andhra Pradesh, A.I.R. 1996 SC 1023
25. Maharshi Avadhesh v. Union of India 1994 Supp. (1) SCC 713
26. Lily Thomas vs Union Of India, (2000) 6 SCC 224
27. Shayara Bano vs Union Of India And Ors.Writ Petition (C) No. 118 of 2016, decided on 22nd August 2017

प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी

भारत भारत है, इंडिया नहीं

भारतवर्ष के लिए इंडिया नाम भी प्रयुक्त किया जाता है। विदेशी लोग तो प्रायः इंडिया शब्द का ही प्रयोग करते हैं किंतु समझ में नहीं आता कि भारतीय लोग इंडिया का प्रयोग क्यों करते हैं? वास्तव में भारत के लिए इंडिया ही नहीं हिंदुस्तान अर्थात् हिंदुओं की भूमि भी प्रयुक्त होता है जो अरब और ईरान में प्रचलित हुआ। प्राचीन काल में यह भारतवर्ष कहलाता था जिसका लघु रूप भारत हो गया जो आधुनिक युग में प्रचलित है। वैदिक काल में इसे आर्यावर्त, जंबू द्वीप और अजनाभ देश के नाम से भी जाना जाता था जिसमें पाकिस्तान, बंगलादेश, बर्मा आदि कई देश सम्मिलित थे। भारत स्वदेशी और वास्तविक नाम है तो इंडिया शब्द हिंदिका शब्द से बना है जो पश्चिम अथवा यूरोप से होता हुआ आया है। वस्तुतः यह आयातित शब्द है जिसमें विदेशी भाषा अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ी मानसिकता छाई हुई मिलती है। हिंदुस्तान फारस और अरब से हो कर आया है। मध्य काल में यह 'हिंदुस्तानी' नाम गंगा-जमुनी तहज़ीब का प्रतीक हो गया जिसे मुगलों ने कहना प्रारंभ किया था। भारत केवल भूखंड का नाम नहीं वरन् इस देश की संस्कृति, समाज और परंपरा से जुड़ा हुआ है। भारत के संविधान में इस देश का आधिकारिक नाम है।

वास्तव में भारत नाम का उल्लेख सर्वप्रथम ऋग्वेद में मिलता है। ऋग्वेद में पुरू, यदु, तुरवश, द्रुहयु और अनु पाँच मुख्य आर्यजन के नाम आते हैं। इनमें पुरुओं की तीन शाखाएँ हुईं -- भारत, तृत्सु और कुशिक। इन्हीं भरत राजाओं की वजह से भारत नाम पड़ा। इनमें दिवोदास और उसका पुत्र सुदास ऋग्वैदिक काल के प्रसिद्ध राजा हुए जिन्होंने जनपदों के छोटे-छोटे राजाओं या राजकों को संगठित करने का कार्य किया। इस तरह 'भारतों' के नाम से भारत नाम पड़ा। ऋग्वेद के प्राचीनतम ऋषि विश्वामित्र अपनी एक ऋचा में इंद्र से प्रार्थना करते हैं --

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्रमतुष्ट्वम्।
विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेंद भारतं जनं (3.53.12)

अर्थात् हे कुशिक प्रभो, ये जो दोनों आकाश और पृथ्वी हैं, इनके धारक इंद्र की मैंने स्तुति की है। स्तोता विश्वामित्र का यह स्तोत्र भारतजन की रक्षा करता है।

इसी प्रकार, शकुंतला और राजा दुष्यंत के पुत्र भरत का नाम भी जोड़ा जाता है। इसके अतिरिक्त, यह भी माना जाता है कि यह नाम मनु के वंशज ऋषभ देव के पुत्र सम्राट भरत के नाम से पड़ा है जिसका उल्लेख श्रीमद्भगवद् पुराण में मिलता है। भारत शब्द 'भारत' के योग से बना है जिसका अर्थ है आंतरिक प्रकाश में लीन।

प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में 'सप्तसिंधु' नाम भी कई बार आया है। इसका प्रयोग क्षेत्र-विस्तार के संदर्भ में हुआ है। यह अनेक जनपदों का मिला-जुला नाम है जिसका भूभाग गंगा से ले कर सिंधु नदी घाटी और उत्तर में हिमालय से ले कर दक्षिण में राजस्थान तथा गुजरात तक फैला हुआ है। ऋग्वेद में दो ऋचाओं (10.75.5-6) में उन्नीस नदियों का उल्लेख मिलता है जिनसे इस क्षेत्र की सिंचाई होती थी। एक ऋचा (1.35.8) में सोने की आँखों वाले सविता देव को सप्तसिंधु की संज्ञा दी गई है। यही सप्तसिंधु देश का पर्याय है, किंतु भारत तो कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से मिजोरम तक फैला हुआ है। हमारी पहचान तो भारतीयता के आधार पर है। इसी प्रकार, आदि काल में 'राष्ट्र' और 'देश' अर्थात् भारत एक ही पर्याय के रूप में प्रयुक्त होते थे। ऋग्वेद में ही राष्ट्र शब्द भारत के संदर्भ में मिलता है -- त्वत् राष्ट्र अधि भ्रशत् (10.173.1)। इस पूरी ऋचा की व्याख्या की जाए तो यह भाव मिलता है -- हे राजन्! हमारे राष्ट्र का तुम्हें स्वामी बनाया गया है। तुम हमारे राजा हो। तुम नीति, अचल और स्थिर हो कर रहो। सारी प्रजा तुम्हें चाहे। तुमसे राष्ट्र नष्ट न हो पावे। इस प्रकार भारत को कई नामों से अभिहित किया गया है, लेकिन भारत का प्रयोग ही अतीतकालीन, प्राकृतिक और स्वाभाविक है।

आज के परिप्रेक्ष्य में भारत और इंडिया का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो भारत नाम भारत की धरती का होने के कारण स्वाभाविक और औचित्यपूर्ण है, क्योंकि यह भारतीय संस्कृति और परंपरा से जुड़ा हुआ है। इंडिया में पाश्चात्य संस्कृति की गंध आती है। भारत राष्ट्रीयता और राष्ट्रवाद के मंत्र की पूजा करता है जबकि इंडिया की नज़र में राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता एक पुराणपंथी अवधारणा है। यह राष्ट्रवाद को पंथनिरपेक्ष अर्थात् सेकुलर नहीं मानता और इसी कारण राष्ट्रवाद को प्रगतिशील भी नहीं मानता। भारत स्वतंत्रता का प्रतीक है तो इंडिया गुलामी का। भारत में देश की अखंडता और एकात्मकता के बीज अंकुरित हैं जबकि इंडिया में विभाजन की जड़ों को पकड़ने की कोशिश होती है। भारतवासियों के लिए भारत उनकी माता है और वे अपने को उसका पुत्र मानते हुए उसका नमन करते हैं -- 'पृथिव्या पुत्रोह', जबकि इंडिया हमारे भीतर संबंधों में परायापन की भावना पैदा करता है। भारत आर्य, द्रविड़, नाग, यक्ष, किन्नर, किरात, मंगोल, मुस्लिम, ईसाई, पारसी आदि अनेक जातियों को अपने सीने से चिपका कर उन्हें स्नेह, प्रेम और

वात्सल्य की छाया देता है और इंडिया एवं हिंदुस्तान इन जातियों को अलग-अलग करने के लिए उकसाता है। भारत हिंदू, जैन, बौद्ध, सिख आदि मतों को एक ही वृक्ष की शाखाएँ मानता है जबकि इंडिया इन्हें अलग-अलग समुदाय और उससे भी आगे बढ़ कर उन्हें संप्रदाय मानता है। भारत हमें अहिंसा पर विश्वास करने और उसका अनुगमन करने का पाठ पढ़ाता है जबकि इंडिया हिंसा की ओर धकेलता है। भारत ऋषि-मुनियों का देश लगता है जबकि इंडिया विलासियों और हिप्पियों का देश लगता है। भारत हमें साधना की ओर प्रोत्साहित करता है तो इंडिया साधनों के पीछे पड़ा रहता है। भारत सौहार्द्र, मैत्री, त्याग और 'वसुधैव कुटुंबकम्' का पाठ सिखाता है जबकि इंडिया इनसे हमें दूर रखने का प्रयास करता है। भारतीय दर्शन, भारतीय संस्कृति, भारतीय परंपरा, भारतीय साहित्य, भारतीय जीवन, भारतीय पुराण और इतिहास, भारत की विकासशीलता आदि भारत की अस्मिता और पहचान है जबकि इंडिया इन सबको अपने भीतर समेट नहीं पाता। एक अन्य बात उल्लेखनीय है कि 'सत्यमेव जयते' हमारे देश भारत का प्रतीक वाक्य है जो मुंडक उपनिषद् से उद्धृत है और यह वाक्य भारतीय विचारधारा को ही उद्घाटित करता है। भारत पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों की पूजा करता है, इसीलिए वह गाय और तुलसी को माता की पदवी देता है। वह गाय की रक्षा करता है जबकि इंडिया उसके भक्षण के लिए लालायित रहता है। भारत गाँवों के अतिरिक्त शहरों में भी निवास करता है जबकि इंडिया केवल शहरों में रहता है। भारत अमीरों और ग़रीबों को समान नज़र से देखता है जबकि इंडिया अमीरों को ही निहारा करता है। भारत भारतीय वस्त्र, खान-पान और जीवन-शैली की पहचान है और इंडिया विदेशी वस्त्र, खान-पान और जीवन-शैली को अपनाने में अपनी शान समझता है। भारत अपनी भाषा हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को अपने भीतर आत्मसात किए हुए है जबकि इंडिया अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ियत के गीत गाता रहता है।

भारत के विकास और आधुनिकीकरण के लिए इधर नई-नई परियोजनाएँ बनाई जा रही हैं और उन्हें 'मेक इन इंडिया', 'स्किल इंडिया', 'स्टार्ट-अप इंडिया', 'डिजिटल इंडिया' आदि अंग्रेज़ी के ज़ोरदार नारों से सुसज्जित किया जा रहा है। अंग्रेज़ी में दिए गए इन नारों से इंडिया के विकसित और आधुनिक होने की आशा तो है लेकिन यह पश्चिमीकरण, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण से अवश्य प्रभावित होंगे। ऐसे इंडिया में विलासिता, भौतिकता, स्वार्थपरकता और परायापन के साम्राज्य की भी संभावना है। साथ-साथ भारतीयता, आध्यात्मिकता, अपनापन और सांस्कृतिक चेतना के दर्शन न होने की पूरी-पूरी आशंका है तथा ग्रामीण जीवन के प्रति संवेदनहीनता के संकेत भी मिल सकते हैं। हिंदी अथवा भारतीय भाषाओं में ये नारे हमारी मानसिकता में परिवर्तन लाने में सहायक हो सकते हैं जो भारत को विकसित और आधुनिक राष्ट्र बनाने में सहायक हो सकते हैं।

अतः भारत को भारत ही रहने दो, इंडिया नहीं। भारत नाम में ही महानता है और यही हमारी पहचान है। यही हमारी अस्मिता है। जय भारत।

हमारा देश भारत है या इंडिया या हिंदुस्तान? यह प्रश्न आजकल प्रबुद्ध वर्ग में जागरुकता पैदा कर रहा है कि इनमें हमारे देश का असली नाम क्या है। वर्धा के मैडिकल कॉलेज के एक प्रोफेसर डॉ. ओम प्रकाश गुप्त ने ई-मेल के द्वारा मुझसे जानकारी माँगी कि भारत का संवैधानिक नाम क्या है - भारत, इंडिया या हिंदुस्तान। संविधान के भाग एक के प्रारंभिक वाक्य में देश का नाम मिलता है। इस बारे में मैंने संविधान के अंग्रेज़ी, हिंदी, मराठी और उर्दू चारों भाषाओं में उपलब्ध संस्करणों का अध्ययन किया तो संविधान में अपने देश का संवैधानिक नाम इंडिया और भारत दोनों का उल्लेख है। संविधान के अंग्रेज़ी संस्करण में लिखा है -- India, also known as Bharat, is a Union of States. अंग्रेज़ी संस्करण के अनुसार इंडिया शब्द प्रमुख है और भारत उसका पर्याय बताया गया है। संविधान के हिंदी संस्करण में लिखा है -- ''भारत अर्थात् इंडिया राज्यों का संघ होगा।'' हिंदी संस्करण में भारत प्रमुख है और इंडिया गौण। मराठी संस्करण में लिखा है -- इंडिया अर्थात् भारत। उर्दू संस्करण में भी 'इंडिया अर्थात् भारत' मिलता है। एक विचित्र बात यह भी है कि संविधान के अंग्रेज़ी संस्करण की उद्देशिका (Preamble) में वर्णित है -- We, the people of India, having solemny resolved to consitute India into a soverign ....this constitution. हिंदी संस्करण की उद्देशिका में वर्णित है -- ''हम, भारत के लोग, भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न ...अंगीकृत, अधिनियमित, और आत्यर्पित करते हैं।'' मराठी उद्देशिका में लिखा मिलता है -- ''आम्ही, भारताचे लोक, भारताचे एक सार्वभौम।'' उर्दू उद्देशिका में लिखा है -- हम, भारत के आवाम, मतानत व संजीदगी से अज्म करते हैं कि भारत को...।'' इस प्रकार संविधान के विभिन्न संस्करणों में भारत और इंडिया दोनों शब्द मिलते हैं। लेकिन हिंदी, मराठी और उर्दू की उद्देशिका में भारत शब्द अधिक मिलता है। मूल रूप से संविधान का निर्माण अंग्रेज़ी में हुआ था। हिंदी, मराठी, उर्दू आदि भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ है। यह बात अलग है कि भारत के संविधान का हिंदी अनुवाद भारत के संसद द्वारा अधिकृत पाठ है तथापि संविधान में इंडिया शब्द प्रमुख रूप से मिलता है। हिंदुस्तान शब्द का उल्लेख न तो नाम में है और न ही उद्देशिका में। यह कारण है कि भारत की सभी संवैधानिक संस्थाओं, सरकारी और प्राइवेट संस्थाओं, शैक्षिक, वाणिज्यिक, विधि संबंधी अनेक संस्थाओं में इंडिया शब्द के प्रयोग को प्रमुखता दी जाती हैं। 'स्किल इंडिया', 'डिजिटल इंडिया' आदि परियोजनाएँ भी इसी का परिणाम है। यदि भारत में कई नगरों और स्टेशनों के नाम बदले जा रहे हैं तो इंडिया का नाम क्यों नहीं? संविधान में भारत शब्द तो पहले से है। इस लिए संविधान में (विधेयक द्वारा) संशोधन कर इंडिया शब्द को हटाया जा सकता है, यदि सरकार और राजनीतिक दल संकल्प ले कर इस पुनीत कार्य को पूरा करने के लिए तत्पर हों।

❑

प्रो. विभा त्रिपाठी एवं शंभुशरण मिश्रा

बाबा साहब भीमराव अंबेडकर की दृष्टि एवं सामाजिक न्याय

सर्वप्रथम एक अत्यंत उम्दा कवि और साहित्यकार नीलाभ के शब्दों से शब्दांजलि अर्पित बाबा साहब भीमराव अंबेडकर जी को --

''मैं अँधेरे का दस्तावेज़ हूँ राख को चिड़िया में बदलने की तासीर हूँ।
मीर हूँ अपने उजड़े दयार का परचम हूँ अपने प्यार का।
मैं आकाश के पंख हूँ समंदर में पलती आग हूँ।
राग हूँ जलते देश का धरती की कोख तक उतरी हुई जड़ें हूँ।
अंतरतारकीय प्रकाश हूँ, मैं लड़ाई का अलम हूँ सम हूँ।
मैं जुल्म को रोकने वाला हर लड़ने वाले का हमदम हूँ।
बड़े-बड़ों से बहुत बड़ा और छोटे से छोटे से बहुत कम हूँ।।

एक ऐसा व्यक्तित्व जिसके विचारों ने दलितों को एकजुट किया आगे बढ़ने का हौंसला दिया और व्यवस्था परिवर्तन की ताक़तों को मज़बूती प्रदान की। अतः ऐसे महान् चिंतक के संबंध में यह बताना अत्यंत उचित है कि कोलंबिया विश्वविद्यालय ने जब अपना 300वाँ स्थापना दिवस मनाया था तब इस आयोजन के पूर्व विश्वविद्यालय द्वारा एक सर्वेक्षण कराया गया। इस सर्वेक्षण में विश्वविद्यालय द्वारा अपने सर्वश्रेष्ठ छात्रों का नाम पूछा गया था। सर्वेक्षण के परिणाम के आधार पर विश्वविद्यायल के मुख्य द्वार पर उस छात्र की कांस्य प्रतिमा लगाने का निर्णय लिया जाना था। विश्वविद्यायल को सर्वाधिक सुझाव डॉ. भीमराव अंबेडकर के लिए प्राप्त हुए और उनकी प्रतिमा विश्वविद्यालय के मुख्य द्वार पर लगाई गई। इस मूर्ति का अनावरण अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति ओबामा ने किया था। इस प्रतिमा के परिचय में लिखा गया है कि इस छात्र ने भारत देश के संविधान का निर्माण किया।

'सामाजिक न्याय' शब्द की व्याख्या कई प्रकार से की गई है। इस शब्द में समाज और न्याय जैसे दो शब्द प्रमुख हैं और दोनों ही शब्द सतत् परिवर्तनशील रहे हैं। सृष्टि के प्रारंभ से आजतक की जो यात्रा हमने पूरी की है उसमें हमें समाज और न्याय दोनों के 'Protean faces' (सतत् परिवर्तनशील रूप) को देखने का मौका मिला है। समाज, सामाजिकता और सामाजीकरण का विषय समाजशास्त्र का और न्याय का विषय धर्म, मीमांसा नैतिकता, विधि एवं संविधान से जुड़ा हुआ है। 'न्याय' एक सापेक्ष शब्द है, एक ही कृत्य किसी के लिए न्याय पूर्ण तो किसी के लिए घोर अन्यायपूर्ण भी होता है। कभी बेंजामिन डिजरैली कहते हैं कि 'Justice means 'truth in action'. तो मार्टिन लूथर किंग कहते हैं कि Injustice anywhere is a threat to Justice everywhere'.

इस पृष्ठभूमि में हमें बाबा साहब के सामाजिक न्याय की संकल्पना को समझने का प्रयास करना है। हमें यह बताने में गर्व का अनुभव करना चाहिए कि बाबा साहब का जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ था जहाँ उनके माता-पिता ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में सेवारत् थे शिक्षण की महत्ता को समझते थे और जिसकी वजह से अंबेडकर साहब ने अपनी लॉ की डिग्री ब्रिटेन से ली और कोलंबिया विश्वविद्यालय अमेरिका से अर्थशास्त्र में पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की। आप अपने माता-पिता की 14वीं संतान थे किंतु भारत के पहले विधि मंत्री बने और भारत के संविधान निर्माण में अपना अप्रतिम योगदान दिया। सामाजिक न्याय को प्राप्त करने के लिए उनका संघर्ष, उनके जन्म के लगभग 100 वर्ष पूर्व के फ्रांसीसी क्रांति के नारे Liberty, equality and fraternity से प्रेरित था। इसलिए आपका सामाजिक न्याय का संघर्ष दो लक्ष्यों को लेकर चलता है -- Dignity और emancipation of the untouchables यानी अस्पृश्य लोगों का सम्मान और उनका सशक्तिकरण। आपका मानना था कि social Justice means equal social opportunity available to everyone to develop their personalities associated with equality and equal rights. 'Dr. Ambedkar's vision of social Justice emanates from his quest for a 'Just society 'Which is based on the idea of casteless society.

'सामाजिक न्याय' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग Sicilian priest के द्वारा 1840 में किया गया था और बाद में John Stuart Mill और Stephen के द्वारा Social Justice और Utilitarianism जैसे शब्दों को प्रयोग किया। maximum happiness to the maximum number of people and ninimum harm to the minimum number of people मूलभूत रूप में 'सामाजिक न्याय' दलित, शोषित एवं उत्पीड़ित लोगों के सशक्तीकरण की बात करता है जिसका मुख्य लक्ष्य यह है कि संपूर्ण मानव जाति हर प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक भेदभाव एवं शोषण से मुक्त हो -- यह सामाजिक न्याय ''मानव अधिकारों की संकल्पना से भी गहराई से जुडा है जिसकी

मान्यता है कि प्रत्येक व्यक्ति जन्म से समान है और मानव-अधिकारों को उसे अर्जित नहीं करना पड़ता है यह तो जन्म से ही उसमें अंतर्निहित होते हैं और जिसका प्रतिसंहरण भी नहीं किया जा सकता।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध का वह समय जब बाबा साहब का जन्म हुआ भारत दासता की जंजीरों में जकड़ा था और भारत की तत्कालीन जाति व्यवस्था ने भारत की जड़ों को खोखला करना प्रारंभ कर दिया था ऐसे में आज़ाद भारत में बाबा साहब ने भी अनेक महान् आत्माओं के साथ एक ऐसे भारत का सपना संजोया था जहाँ समानता का भाव होगा और जहाँ जाति, धर्म, लिंग, नस्ल और अर्थ के आधार पर किसी का वर्गीकरण नहीं होगा। बाबा साहब 1917 में अपनी पढ़ाई पूरी करके भारत लौटे और तबसे ही अपने सामाजिक न्याय की प्राप्ति का अपना संघर्ष प्रारंभ कर दिया। यह वह समय था जब ब्रिटिशर्स विभिन्न समूहों की भागीदारी प्रशासन एवं विधायिका में बढ़ा रहे थे ऐसे समय में 'South Borough Comittee' के सामने जनवरी 1919 में आपने जाति विभेद के विरुद्ध उपचार प्राप्त करने के लिए अपना पहला व्यवस्थित तर्क प्रस्तुत किया।

इसके द्वारा पहली बार मुस्लिम समुदाय को अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता मिली और सिक्ख, आंग्ल भारतीय एवं अस्पृश्य लोगों ने विधायिका में अपने पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग की। यद्यपि 1919 के 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट' में इस बात का कोई परिवर्तन नहीं दिखा किंतु यह बात स्थापित हो गई कि ऐसे समुदाय हैं जिनकी विशिष्ट पहचान है और जिसको पृथक् प्रतिनिधित्व चाहिए। इसके पश्चात्, तक़रीबन 10 वर्षों बाद जब 1919 के अधिनियम को revise करने का प्रयत्न किया गया तब अंबेडकर जी ने 'साइमन कमीशन' के समक्ष अपने ज्ञापन दिए जिसकी वजह से राज्य एवं केंद्रीय विधायिका में पुनः संशोधन आरक्षण को स्वीकार किया गया -- जिस तरह के आरक्षण की स्थिति वर्तमान में है उसका स्वरूप 1940 तक तैयार हो गया था जिसे अंतिम रूप 1947 में संविधान निर्माण के समय दिया गया।

भारत का संविधान एवं बी.आर. अंबेडकर, इन शब्दों को कुछ विद्वानों ने समानार्थी शब्द तक कह दिया है। वहीं कुछ लोग 'मनु' जिन्हें प्रथम विधि प्रदाता माना जाता है -- की तर्ज़ पर बाबा साहब को 'वर्तमान मनु' और संविधान को 'भीम स्मृति' की संज्ञा तक दे दी है। जॉन ऑस्टिन ने भारतीय संविधान को एक सामाजिक दस्तावेज़ की संज्ञा दी है।

भारतीय संविधान की कुँजी कही जाने वाली संविधान की प्रस्तावना में ही 'सामाजिक न्याय' शब्द का प्रयोग किया गया है और जो संविधान के आधारभूत ढाँचे से जुड़ा है और जिसे संशोधित, परिवर्तित या ख़त्म कभी नहीं किया जा सकता।

ऐसे संविधान निर्माण के द्वारा बाबा साहब ने पूरा करना चाहा था 'सामाजिक न्याय' का ऐसा लक्ष्य जिसमें सभी समान हों। जहाँ तक जातिगत असमानता या भेदभाव की बात थी अंबेडकर जी का मानना था कि दुनिया में जितने भी क़िस्म का भेदभाव किया जा सकता है वह सबसे ज़्यादा खुलकर तब सामने आता है जब जाति को केंद्र में रखकर अधिकारों का निर्धारण किया जाता है। फिर चाहे ये सामाजिक अधिकार हों, आर्थिक अधिकार हों, सांस्कृतिक अधिकार हो, संपत्ति, शिक्षा या रोज़गार का अधिकार हो या फिर कोई अन्य मौलिक या मानव अधिकार हीं क्यों न हो इसमें सबसे ज़्यादा उत्पीड़न वंचना और प्रताड़ना अस्पृश्य एवं बहिष्कृत समझी जाने वाली जातियों को ही झेलनी पड़ती है।

यहाँ एक बात और स्पष्ट हो जानी चाहिए कि भेदभाव तो एक प्रकार का दीमक है जो किसी को भी नहीं छोड़ेगा और जब हमारी नीति भेदभाव को प्राथमिकता देने की होगी तो ऐसा एक ही जाति के लोगों में भी अनेक आधारों पर दिखाई देगी अर्थात् आर्थिक एवं लैंगिक आधारों पर और स्पष्ट रूप से भेदभाव नीति देखी जा सकती है।

वर्तमान जाति व्यवस्था ने भारत को सिर्फ़ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में ही नहीं बाँटा है वरन् इनको अलग-अलग भी कई प्रकार से बाँटा है जैसे ऊँचे कुल का ब्राह्मण या नीचे कुल का ब्राह्मण इत्यादि।

समता के अधिकार के प्रति अंबेडकर जी का संघर्ष जब हम याद करते हैं तो इस बात पर भी हमारी सहमति बनती है कि जितना ज़्यादा विकास हम करते जा रहे हैं चाहे भौतिक रूप से हो या वैचारिक रूप से हो हम भेदभाव एवं असमानता के नए स्वरूप एवं दृष्टिकोण से भी दो-चार हो रहे हैं।

आज के समय में वैश्विक स्तर पर विभिन्न देशों के बीच एवं राष्ट्रीय स्तर पर विकास, अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा के आधार पर स्तरीकरण बढ़ता जा रहा है। वैश्वीकरण, निजीकरण एवं उदारीकरण के दौर में असमानता के नित नए आयाम सामने आ रहे हैं। शोषण की नई प्रकृति दिखाई दे रही है और सामाजिक असमानता की निरंतर बढ़ती खाई में अपराध बढ़ रहे हैं। कुंठा और निराशा बढ़ रही है और अवसादग्रस्त लोगों में आत्महत्या की दर भी बढ़ रही है। व्यक्तिवादी सोच अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचकर स्वतंत्रता के नए अर्थ खोज रही है और जर्जर बेज़ार और लाचार क़ानून व्यवस्था का दमखम बनाए रखने का प्रयास भी धराशायी होता जा रहा है विकृत एवं अश्लील पूँजीवादी संस्कृति ने जिन चुनौतियों को प्रस्तुत किया है उनसे निजात पाना वर्तमान सामाजिक न्याय का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य बन गया है।

आज के समाज में धर्म और जाति के आधार पर ही विभाजन नहीं हो रहा है वरन् भाषा, लिंग और अर्थ के आधार पर विभाजन का चरम समय भी दिखाई दे रहा है जिसमें

कभी महिला अस्पृश्य हो रही है तो कभी मज़दूर अस्पृश्य हो रहा है और हम (Vulnerable class (अछूत), subaltern class (निम्न वर्ग) और Doubly subaltern class (अति निम्न जाति) जैसे शब्दों की बाजीगरी में उलझते जा रहे हैं।

ऐसे इस समाज के तथाकथित ठेकेदार अपने हिसाब से न्याय व्यवस्था चला रहे हैं फिर चाहे वो किसी ग्रामीण समाज की पंचायत हो या फिर खाप पंचायत हो। इनके फ़ैसलों से अस्पृश्यता की नित नई परिभाषा ही गढ़ी जा रही है। एक विचारणीय प्रश्न यह भी है कि यह वह समाज है जहाँ 65 वर्ष की वृद्ध महिला को चुड़ैल बताकर पीटा जाता है और उसका सिर मुँड़ाकर उसे गाँव में घुमाया जाता है। यह वही समाज है जहाँ एक आदिवासी महिला को अपनी मर्ज़ी से विवाह करने पर पंचायत उसके साथ पूरे गाँव को मजा करने का आदेश देती है। यह वह समाज है जब बलात्संग की पीड़ित दलित महिला के सर्मथन में न तो आंदोलन किया जाता है न ही कैंडिल मार्च निकाला जाता है और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भी अपनी संवेदना बेहद लाचारी के साथ प्रस्तुत करते हैं। एक आदिवासी अशिक्षित और दिव्यांग महिला के साथ विवाह का वादा करके संबंध बनाया जाता है तब जाकर हमारे उच्चतम न्यायालय द्वारा दिव्यांगों के लिए अलग प्रतिकार क़ानून की बात उठाई जाती है। ऐसे में यही प्रश्न कौंधता है कि हम सामाजिक न्याय की किस संकल्पना पर चर्चा करें जो दे सके एक सुकून कि नहीं, न्याय होगा, क्योंकि उत्कर्ष एवं विकास की बहुमंजिली इमारत पर चढ़ने के बाद भी बौना है एक आम आदमी का क़द, व्यक्ति व्यवस्था का चाल चलन विकृत एवं विकराल होता जा रहा है और तथाकथित सभ्य समाज का स्वाँग असभ्यता भरे कुकृत्यों के कारण आए दिन अपना भोंडा सच उजागर करता है।

शर्मशार होती मानवता एवं तार-तार होती संवेदना एक चुनौती है समाज के उस वर्ग के लिए जिन्हें महसूस होती है उतनी ही पीड़ा जैसे कि मानो यह उनके स्वयं के साथ धरित कुकृत्य हो। यहाँ एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात पर ध्यान आकृष्ट कराना होगा कि जो लोग इस बात का दावा करते है कि वे अंबेडकरपंथी या अंबेडकरवादी है; वे भी बाबा साहब की अपेक्षाओं पर खरे नहीं उतरे और बाबा साहब की विचारधारा के प्रति सच्ची प्रतिबद्धता भी नहीं दिखा पाए।

ऐसे में एक महत्त्वपूर्ण बात सामने आती है और वह यह कि जब हम शोषण और उत्पीड़न मुक्त समाज के निर्माण के बारे में सोचते हैं तब हमें यह भी मानना होगा कि अब ऐसे नारों से लक्ष्य सिद्ध नहीं होगा कि 'विश्व के दलितों एक हों' क्योंकि यह कमोवेश उसी नारे का रूपांतरण है जब कहा गया था कि विश्व के मज़दूरों एक हों या विश्व की बहनों एक हो क्योंकि हमारी पीड़ा में समानता है।

आज का समय यह माँग करता है कि यदि महिला उत्पीड़न रोकना है तो समस्त स्त्री विमर्श पुरुषों के साथ मिलकर और उनको शामिल करके करना होगा जिसे हम Engaging men in gender equality कहते हैं। उसी प्रकार समाज के जिस अर्थ वर्ण या जाति के लोगों को दूसरे जिस वर्ग वर्ण या जाति के लोगों से शिकायत है उन्हें ही चर्चा में शामिल करना होगा। उनसे विमर्श करना होगा यानि नारा होगा (उत्पीड़न) Engage capitalists to overome the problem of Bourgeous Engage savarnas to overcome the problem of dalits and untouchables.

वर्तमान समय जो उत्तर आधुनिक विचारों का काल है वह opperssion of women by women की भी बात करता है जिसकी अगली विवेचना होगी oppression of dalit by dalit तो ऐसे में यही कहा जा सकता है कि उत्पीड़न के ख़िलाफ़ चलाया जा रहा एक आंदोलन दूसरे से पृथक् न समझा जाए और उसमें भी समावेशी नीति का अनुपालन किया जाना चाहिए। जब वर्ग संघर्ष में जातीय भेदभाव भी देखा जाएगा और जाति के सवाल को वर्ग के नज़रिए से भी देखा जाएगा जब स्त्री के उत्पीड़न को मानव का उत्पीड़न मानकर मानव अधिकारों से जोड़ा जाएगा तब निश्चित ही समय बदलेगा और सामाजिक न्याय की संकल्पना सही अर्थो में चरितार्थ हो सकेगी ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। अंत में बाबा साहब के उद्देश्यों को बताती इन चार लाइनों के साथ लेख को समाप्त करते हैं... ''झुका ही देंगे आख़िर झंझावातों को और वापस लौटने को कर देंगे विवश थपेड़ों को... क्योंकि ज़िंदगी आख़िर ज़िंदगी है ऊर्जस्वित लहरें उसकी बढ़ती है हमेशा आगे को और डुबोती चली जाती हैं हर रुकावट को...।''

❑

समाचार

विक्रम शिला हिंदी विद्यापीठ के उज्जैन में आयोजित 22वें वार्षिक अधिवेशन में 13 दिसंबर, 2018 को श्रीमती सन्तोष खन्ना को उनकी साहित्यिक, विधिक एवं दीर्घकालीन सेवाओं के उपलक्ष्य में 'विद्या वाचस्पति सारस्वत' की मानद सम्मान की उपाधि से अलंकृत किया गया।

संतोष बंसल

धारा 497 हटाने का अर्थ

इस साल सुप्रीम कोर्ट ताबड़तोड़ बड़े-बड़े फ़ैसले सुना रहा है और लगातार सुर्खियों में बना हुआ है। बीते दिनों जिस तरह का फ़ैसला समलैंगिक संबंधों को लेकर आया और अभी जो फ़ैसला विवाहेत्तर संबंधों पर आया उसने भारतीय नागरिकों को एकबारगी सन्न अवस्था में छोड़ दिया है क्योंकि अब विवाहेत्तर संबंध यानी 'Extramarital affairs' अपराध नहीं है और कोर्ट ने 'Adultery' (व्यभिचार) मामले में आई.पी.सी. की धारा 497 को असंवैधानिक क़रार दिया है। भारत के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा और जस्टिस खान विलकर की इस अहम उद्घोषणा के साथ, ''Adultery Law is manifestly arbitrary, It creates dent on the individuality of women.'' धारा 497 को रद्द कर दिया गया है।

27 सितंबर, 2018 से पति-पत्नी द्वारा किसी दूसरे से संबंध बनाना अपराध नहीं रहा। इस फ़ैसले की प्रतिक्रिया स्वरूप लोगों में भ्रामक धारणाएँ पनपने के साथ, सोशल मीडिया और समाज दोनों को गर्मागर्म बहस का मुद्दा मिल गया है। सोशल मीडिया पर तो पक्ष और विपक्ष में कमेंट्स और टिप्पणियों की झड़ी लगी हुई है, किंतु बुद्धिजीवियों के बीच भी यह मामला बड़ा पेचीदा और विवाद का विषय है। अच्छे-अच्छे लोगों को क़ानूनन 'अडल्ट्री' अब अपराध नहीं यह बात पच नहीं रही है और वे इसमें भारतीय परंपरा और मूल्यों का ह्रास देख रहे हैं। इनमे अधिकतर पचास के ऊपर उम्र की वह पीढ़ी है, जो नैतिकता और भारतीय संस्कृति के तानो-बानो में बँधी है। उनका मानना है कि हम 'वैस्टर्न कल्चर' को अपना रहे हैं, जिसका हमारे 'संस्कृति' पर ग़लत असर होगा। दूसरे व्यभिचार के अपराध पर चाहे सज़ा न हो, किंतु जुर्म का कोई ऐसा प्रावधान तो होना चाहिए, जिससे इस तरह के संबंधों पर रोक लगे। इस क़ानून की समाप्ति में वह चरित्र की उच्छृंखलता और पारिवारिक व्यवस्था के ध्वस्त होने की आहट देख रहे हैं और इसमें उन्हें स्त्री-पुरुष की यौनिक आज़ादी का निर्बंध खुला रास्ता दिख रहा है।

लेकिन यह भी समाज का सच है कि अवैध संबंधों के कारण हत्या-आत्महत्या और अन्य हैवानियत भरे अपराधों की ख़बरें लगातार आती रहती हैं, जिसमें कहीं पति, कहीं पत्नी और उनके प्रेमी-प्रेमिका के साथ उनके बच्चे भी इस अपराध का शिकार बन जाते हैं। विवाह पूर्व संबंधों तथा विवाह संस्था में यकीन न रखने के कारण जहाँ क़ानूनी पेचीदगियाँ पैदा हुई हैं, वहीं 'आत्महत्या' दर में बढ़ोतरी हुई है। क्योंकि अगर युवा वर्ग की बात की जाए, तो वह 'वैश्वीकरण' के बदलते परिवेश के बीच अधिक 'व्यावहारिक' और यथार्थवादी हैं। आधुनिक जीवनशैली और रिश्तों के प्रति नए नज़रिये ने पारवारिक ढाँचे को काफ़ी बदल दिया है। अब वे विवाह संस्कार को ही आपसी रिश्ते में महत्त्वपूर्ण नहीं मानते और 'लिव-इन-रिलेशन' या 'रिलेशन विदाउट बॉउंडेशन' में विश्वास रखते हैं। दूसरे सोशल मीडिया के आभासी रिश्तों और संबंधों में उपजे खुलेपन के कारण वह सैक्स और देह को अलग दृष्टि से देखते हैं। उनकी नज़र में 'वर्जिन' होना कोई उपयोगिता नहीं रखता और एक से अधिक से दैहिक रिश्ता रखना कोई बुराई नहीं। उनके अनुसार-यह सबका 'पर्सनल चॉइस' है, जिसमें बिना अपराध बोध के जो वह चाहता है, कर सकता है। आज का युवा वर्ग कहता है कि वह अपने शरीर और दिमाग़ का मालिक ख़ुद है एवं किसी संबंध को क़ानून में बाँधकर मूल्यांकित नहीं किया जा सकता। यह सबका 'पर्सनल अफेयर' है, जिसमे न्याय का दख़ल नहीं होना चाहिए। मुझे अभी हाल में ही आई अभिनेता संजय दत्त के जीवन पर आधारित फिल्म का वह सीन याद आ रहा है, जिसमे 'एक्टर' स्वीकर करता है कि उसके लगभग तीन सौ स्त्रियों से 'फ़िजिकल रिलेशन' रहे हैं। इसीलिए इन सब पहलुओं को मद्देनज़र रखते हुए हमें इस फ़ैसले का स्वागत करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, किसी भी क़ानून की महत्ता समयानुसार बदलती रहती है एवं उन परिस्थितियों के अनुरूप होती है। जैसे-जैसे स्थितियाँ परिवर्तित होती हैं, उन्ही के अनुकूल क़ानूनों में सुधार या बदलाव लाना चाहिए। उदाहरण के तौर पर हमें धारा 377 के ख़त्म होने में ख़ुशी से ज़्यादा दुःख होता है कि इतनी देर से क्यों? इतनी लंबी लड़ाई क्यों? तीन तलाक़ के ख़त्म होने पर भी यही महसूस हुआ और अब धारा 497 के अंसवैधानिक क़रार करने पर भी यही लगा। ये सारे ही नियम-क़ानून कम से कम डेढ़ सौ साल पुराने हैं और अब जिनकी प्रासंगिकता ख़त्म हो चुकी है। पिछले पंद्रह-बीस सालों में सामाजिक सोच में बड़ा बदलाव आया है, अब 'पति-पत्नी और वो' मुद्दा उतना अहम नहीं जितना सातवें-आठवें दशक में था। इससे पूर्व, जब संजीव कुमार और विद्या सिन्हा की यह फिल्म आई थी तो भारतीय समाज में नई प्रचलित धारणा 'सारे नियम तोड़ दो, नियम पर चलना छोड़ दो' के उद्घोष से बहुत बवाल मचा था। इसीलिए इस टॉपिक पर चर्चा से पूर्व हम वर्तमान परिवेश और भारतीय मिथक तथा पौराणिक संदर्भ में भी कुछ कहना चाहेंगे। प्रसिद्ध

आख्यान 'महाभारत' की कथा में हस्तिनापुर के सिंहासन के वारिस के लिए महारानी सत्यवती द्वारा ऋषि व्यास को आमंत्रित कर तीनों रानियों को गर्भाधारण करवाया गया था, जिनसे क्रमशः धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर का जन्म हुआ। इस तरह भारतीय परंपरा में दैहिक संबंधों को वारिस या वंश वृद्धि का उपक्रम माना जाता रहा है। इसके अतिरिक्त, इतिहास साक्षी है कि स्त्रियों का देवदासी प्रथा के अंतर्गत शोषण किया जाता था एवं राजा-महाराजाओं तथा ज़मींदारों के यहाँ रखैल या दूसरी स्त्री रखना रिवाज़ रहा है। वेश्यावृत्ति तो समाज और स्त्री के लिए अभिशाप बनी हुई है ही, जिसकी आड़ में पुरुष सदैव ही अपनी वासना की पूर्ति करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी क़ानून की उपयोगिता समय और स्थिति पर निर्भर करती है। इसीलिए 'अडल्ट्री' क़ानून की समाप्ति के कारण जाँचने के लिए हमें इस का इतिहास और इसकी वैधता परखनी होगी।

अब हम इस क़ानून के विषय में विस्तार से बताने से पूर्व, इसके बनाने के बारे में बात करेंगे। सुप्रीम कोर्ट ने जिस 'अडल्ट्री' क़ानून धारा-497 पर अपना फ़ैसला सुनाया है, वह क़ानून क़रीब 158 साल पुराना है। अंग्रेज़ी शासन के दौरान 1860 में भारतीय दंड संहिता (इंडियन पैनल कोड) का ड्रॉफ्ट तैयार किया गया था। अपराध को क़ानूनी रूप से परिभाषित करने और उसके लिए सज़ा का प्रावधान करने वाला यह ड्रॉफ्ट ब्रिटिश इंडियन गवर्नमेंट द्वारा 1834 में स्थापित पहले लॉ कमिशन की अनुशंसा के आधार पर तैयार किया गया था। भारत में अंग्रेज़ी शासन के लॉ कमिशन के पहले अध्यक्ष थॉमस बबिंगटन मैकाले थे। 1862 से यह क़ानून ब्रिटिश इंडियन गवर्नमेंट के इलाकों में लागू हो गया था। 1940 तक भारतीय रियासतों में यह क़ानून जबरन लागू नहीं किया गया था, क्योंकि भारतीय रियासतों के पास उनकी अपनी क़ानून व्यवस्था थी और अपने न्यायालय थे। तब से अब तक इंडियन पीनल कोड 1860 में कई संशोधन हो चुके हैं, लेकिन भारतीय परंपरा और मौजूद धर्मों की मान्यताओं को देखते हुए आई.पी.सी. में एक पुरुष द्वारा दूसरे पुरुष की पत्नी से सहमति से संबंध बनाना अपराध माना गया है। इस अपराध को आई.पी.सी. की धारा 497 में परिभाषित किया गया है, जिसके तहत दोषी पाए जाने वाले व्यक्ति को पाँच साल तक की जेल हो सकती है। हालाँकि इस अपराध में अपराध करने वाले सिर्फ़ पुरुष को ही सज़ा मिलने का प्रावधान था, स्त्री को नहीं। यानी व्याभिचार के नाम पर उक्त महिला का पति उस पुरुष के ख़िलाफ़ केस दर्ज़ करा सकता है, किंतु अपनी पत्नी के ख़िलाफ़ कार्यवाही नहीं कर सकता है और न ही विवाहेत्तर संबंध में लिप्त पुरुष की पत्नी इस दूसरी महिला के ख़िलाफ़ कोई कार्यवाही कर सकती है।

इसी क़ानून को 27 सितंबर, 2018 गुरुवार को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया यानी अब कोई पुरुष या महिला किसी ग़ैर-पुरुष या महिला के साथ सहमति से संबंध

बनाता है तो उसे अपराध नहीं माना जाएगा। अब सवाल उठता है कि व्यभिचार भारत में अपराध कैसे बना? फ़ैसला सुनाने वाले पाँच सदस्यीय संविधान पीठ में शामिल न्याय मूर्ति आर.एफ.नरीमन और न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा ने अपने फ़ैसलों में इसका ज़िक्र किया कि आख़िरकार व्यभिचार भारत में अपराध कैसे बना? दोनों ही न्यायधीशों ने 1860 के क़ानून के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 497 में शामिल इस पुराकालीन क़ानून को निरस्त करने का फ़ैसला दिया। न्यायमूर्ति नरीमन ने कहा कि प्रावधान का असल रूप तब सामने आता है जब वह कहता है कि पति की सहमति या सहयोग से अगर कोई अन्य व्यक्ति विवाहित महिला से यौन संबंध बनाता है तो वह व्यभिचार नहीं है। यह रेखांकित करते हुए कि सन् 1955 तक हिंदू पुरुष जितनी महिलाओं से चाहे विवाह कर सकते थे, न्यायमूर्ति नरीमन ने कहा, ''1860 में जब दंड संहिता लागू हुई, उस वक़्त देश की बहुसंख्यक जनता हिंदुओं के लिए तलाक़ का कोई क़ानून नहीं था, क्योंकि विवाह को संस्कार का हिस्सा समझा जाता था।'' पीठ में शामिल एकमात्र महिला न्यायधीश न्यायमूर्ति मल्होत्रा ने भी अपने फ़ैसले में यह रेखांकित किया कि भारत में मौजूद भारतीय-ब्राह्मण परंपरा के तहत महिलाओं के सतीत्व को उनका सबसे बड़ा धन माना जाता था। पुरुषों के रक्त की पवित्रता बनाए रखने के लिए महिलाओं के सतीत्व की कड़ाई से सुरक्षा की जाती थी। उन्होंने कहा, ''इसका मक़सद सिर्फ़ महिलाओं के शरीर की पवित्रता की सुरक्षा करना नहीं था, बल्कि यह सुनिश्चित करना था कि महिलाओं की यौन इच्छा पर पतियों का नियंत्रण बना रहे। ''इसीलिए इस कटघरे से बाहर निकालते हुए उच्चतम न्यायालय ने कहा, ''The wife can't be treated as chattel.''

सुप्रीम कोर्ट ने पहले स्त्री को पारिवारिक संपत्ति का अधिकार देकर उसकी लैंगिक बराबरी का रास्ता बनाया और अब एक सौ अठावन साल पुराने इस क़ानून को रद्द करके उसकी यौनिक आज़ादी का रास्ता खोल दिया है। संभवतः सुप्रीम कोर्ट ने पहली बार इतने स्पष्ट ढंग से रेखांकित किया है कि देह स्त्री की संपत्ति है और उसे इस के बारे में फ़ैसला करने का अधिकार है। जिन दो मोर्चों पर स्त्री लगातार संघर्षरत् रही है, उसमें धीरे-धीरे उसे जीत मिलती दिख रही है। हालाँकि स्त्री की यौनिक आज़ादी का जिक्र छिड़ते ही लोग बिफर जाते हैं और सिर्फ़ इसी वजह से वे 'अडल्ट्री लॉ' के समाप्त करने के विरोध में उतर आते हैं। न्यायमूर्ति नरीमन ने अपने फ़ैसले में कहा, ''ऐसी स्थिति में यह समझा पाना बहुत मुश्किल नहीं है कि एक विवाहित पुरुष द्वारा अविवाहित महिला के साथ यौन संबंध अपराध की श्रेणी में नहीं था। उस वक़्त तलाक़ के संबंध में कोई क़ानून ही नहीं था, ऐसे में व्यभिचार को तलाक़ का आधार बनाना संभव नहीं था। उस दौरान हिंदू पुरुष अनेक महिलाओं से विवाह कर सकते थे, ऐसे में अविवाहित महिला के साथ यौन संबंध अपराध नहीं था, क्योंकि भविष्य में दोनों के विवाह करने की संभावना बनी

रहती थी।'' उन्होंने कहा, ''हिंदू कोड आने के साथ ही 1955-56 के बाद एक हिंदू व्यक्ति सिर्फ़ एक पत्नी से विवाह कर सकता था और हिंदू क़ानून में परस्त्री गमन को तलाक़ का एक आधार बनाया गया।'' न्यायमूर्ति मल्होत्रा ने अपने फ़ैसले में इस तथ्य का जिक्र किया कि 1837 में भारत के विधि आयोग द्वारा जारी भारतीय दंड संहिता के पहले मसौदे में परस्त्री गमन को अपराध के रूप में शामिल नहीं किया गया था।

यह भी दृष्टव्य है कि आधुनिक शिक्षित समाज में इस क़ानून पर विवाद उठने लगा था और इसमें विधमान कई 'लूप होल्स' उनके तर्क से बाहर थे। जैसे 497 के मुताबिक अगर कोई मर्द किसी दूसरी शादीशुदा औरत के साथ उसकी सहमति से शारीरिक संबंध बनाता है, तो पति की शिकायत पर इस मामले में पुरुष को 'अडल्ट्री' क़ानून के तहत दोषी माना जाता है। दूसरे कोई व्यक्ति किसी ऐसी स्त्री से यौन संबंध बनाता है, जिसके बारे में वह जानता है कि वह किसी ओर की पत्नी है और ऐसे यौन संबंध बलात्कार की श्रेणी में नहीं आते तो वह व्यक्ति अडल्ट्री या व्यभिचार का दोषी है। ऐसा करने पर पुरुष को पाँच वर्ष की कारावास में क़ैद या जुर्माना या फिर दोनों ही सज़ा का प्रावधान है और ऐसे मामले में पत्नी 'उकसाने वाली' या 'बहकाने वाली' नहीं मानी जाएगी एवं उसे दंड नहीं दिया जाएगा। अगर कोई शादीशुदा पुरुष किसी कुँवारी या विधवा महिला से शारीरिक संबंध बनाता है तो वह 'अडल्ट्री' के तहत दोषी नहीं माना जाएगा। दूसरे इस धारा के तहत ये भी प्रावधान है कि इस तरह के संबंधों में लिप्त पुरुष के ख़िलाफ़ केवल उस की साथी महिला का पति ही शिकयत दर्ज़ कर कार्यवाही करा सकता है, किसी दूसरे रिश्तेदार अथवा क़रीबी की शिकायत पर ऐसे पुरुष के ख़िलाफ़ कोई शिकायत नहीं स्वीकार होगी। भारतीय समाज में पुरुष वर्ग की ओर से इस क़ानून पर सदैव आपत्ति दर्ज़ करवाई जाती रही है और सवाल उठता रहा है कि जब दो व्यस्कों की सहमति से कोई विवाहेत्तर संबंध बनाए जाते हैं तो इसकी सज़ा सिर्फ़ एक पक्ष को ही क्यों दी जाए? और शीर्ष कोर्ट को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि धारा 497 के तहत पुरुष और महिला दोनों को बराबर की सज़ा मिलनी चाहिए या नहीं?

इसी सवाल को उठाते हुए इटली में रहने वाले केरल के एन.आर.आई. जोसेफ शाइन ने 10 अक्टूबर, 2017 में सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दायर कर आई.पी.सी. की धारा 497 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी थी। याचिका में शाइन ने कहा कि पहली नज़र में धारा 497 क़ानून अंसवैधानिक है क्योंकि वह पुरुषों और महिलाओं में भेदभाव करता है तथा संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 का उल्लंघन करता है। उन्होंने अपील की थी कि पुरुष और महिला दोनों को ही बराबर सज़ा मिलनी चाहिए। केंद्र सरकार ने यह कहते हुए क़ानून का समर्थन किया था कि विवाह जैसी संस्था की पवित्रता बनाए रखने के लिए यह क़ानून आवश्यक है। उनका मानना था कि अडल्ट्री

से जुड़े क़ानून को हल्का करने या इसमें बदलाव करने से देश में शादी जैसी संस्था ख़तरे में पड़ सकती है। केंद्र सरकार की तरफ़ से एडिशनल सॉलिसिटर जनरल पिंकी आनंद ने साफ़ कहा कि हमें अपने समाज में हो रहे विकास और बदलाव के हिसाब से क़ानून को देखने की ज़रूरत है, न कि पश्चिमी देशों के नज़रिए से ऐसे क़ानून पर राय देनी चाहिए। जिसके जवाब में 8 दिसंबर, 2017 को न्यायालय ने व्यभिचार से जुड़े दंडात्मक प्रावधानों की संवैधानिक वैधता की समीक्षा करने की हामी भरी और पाँच जनवरी, 2018 को न्यायालय ने व्यभिचार से जुड़ी इस याचिका को पाँच सदस्यीय संविधान पीठ के पास भेजा। इस प्रकार यह प्रक्रिया शुरू हुई, जिसके लिए सुनवाई से संबंधित निम्नलिखित घटनाक्रम चला --

1. 1 अगस्त, 2018 को संविधान पीठ ने मामले की सुनवाई शुरू की।
2. 2 अगस्त, 2018 को न्यायालय ने कहा कि वैवाहिक पवित्रता एक मुद्दा है, लेकिन व्यभिचार के लिए दंडात्मक प्रावधान अतंतः संविधान प्रदत्त समानता के अधिकार का उल्लंघन है।
3. 8 अगस्त, 2018 को केंद्र ने व्यभिचार के संबंध में दंडात्मक क़ानून बनाए रखने का समर्थन किया, कहा कि यह सामाजिक तौर पर ग़लत है और इससे जीवन साथी,बच्चे और परिवार मानसिक तथा शारीरिक रूप से प्रताड़ित होते हैं।
4. 8 अगस्त, 2018 को न्यायालय ने छह दिन तक चली सुनवाई के बाद व्यभिचार संबंधी दंडात्मक प्रावधानों को चुनौती देने वाली याचिका पर फ़ैसला सुरक्षित रखा।
5. 27 सितंबर 2018 को न्यायालय की पाँच सदस्यीय संविधान पीठ ने भारतीय दंड संहिता की धारा 497 को असंवैधानिक बताते हुए इस दंडात्मक प्रावधान को निरस्त कर दिया।

अपने फ़ैसले में धारा 497 की परख करते हुए पीठ ने कहा कि इसके तहत सिर्फ़ पुरुष अपराधी होता है, जबकि महिलाओं को अपराधी नहीं, पीड़िता माना जाता है। एक सौ पचास साल पुराने क़ानून को पुरातनकालीन बताते हुए संविधान पीठ ने कहा कि कोई क़ानून महिलाओं को यह कहते हुए संरक्षण नहीं दे सकता कि अनैतिक रिश्ते रखने के मामले में हमेशा महिला पीड़िता होती हैं तथा इसके दायरे में महिलाएँ नहीं है, सिर्फ़ पुरुष तक ही इसे सीमित रखा गया, यह एक बड़ी ख़ामी है। इसमें प्रत्येक परिस्थिति में महिलाओं को पीड़िता माना जाता है, जबकि पुरुषों के ख़िलाफ़ क़ानूनी कार्यवाही और अभियोग चलता है। यह अज़ीब विरोधाभास है कि अगर पुरुष के ख़िलाफ़ केस बनता है तो उस महिला के ख़िलाफ़ क्यों नहीं बनता, जो पुरुष के साथ सहमति में बराबर की भागीदार है। दूसरे यह भी अज़ीब स्थिति है कि महिला की ओर से उसका कोई रिश्तेदार शिकायत नहीं कर सकता। महिला के बेटे-बेटी के एतराज़ का कोई मायने नहीं है, अगर

महिला का पति ऐसे संबंध के मामले में शिकायती नहीं है। यहाँ महिला को प्रॉपर्टी की तरह माना गया है और इसके अतिरिक्त इस क़ानून में कई दाव-पेंच है जिनके विषय में हाई कोर्ट की वकील रेखा अग्रवाल बताती हैं कि इस क़ानून में कई भेदभाव दिखते हैं। अगर किसी महिला का पति किसी और महिला के साथ संबंध बनाता है और उक्त महिला की सहमति है तो फिर ऐसे मामले में महिला अपने पति या फिर उस महिला के ख़िलाफ़ शिकायत दर्ज़ नहीं करा सकती जिस महिला के पति ने व्यभिचार का अपराध किया है, उसके ख़िलाफ़ महिला सिर्फ़ उस आधार पर तलाक़ ले सकती है, लेकिन महिला खुद शिकायती बन अपराधिक केस नहीं दर्ज़ करा सकती। इन्हीं आधारों पर देश के उच्चतम न्यायलय ने केंद्र सरकार से यह भी जानना चाहा कि व्यभिचार संबंधी क़ानून से जनता की क्या भलाई है?

अंततः इन्हीं सब मुद्दों को देखते हुए व्यभिचार को अपराध की श्रेणी से बाहर करते हुए उच्चतम न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 497 को असंवैधानिक क़रार देते हुए निरस्त कर दिया और कहा कि यह महिलाओं की व्यक्तिकता को ठेस पहुँचाता है और इस प्रावधान ने महिलाओं को 'पतियों की संपत्ति' बना दिया था। मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा की अध्यक्षता वाली पाँच सदस्यीय संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से व्यभिचार से संबंधित 158 साल पुरानी भारतीय दंड संहिता की धारा 497 को असंवैधानिक क़रार देते हुए इस दंडात्मक प्रावधान को निरस्त कर दिया। मुख्य न्यायधीश दीपक मिश्रा ने अपने और जस्टिस खानविलकर की ओर से फ़ैसला पढ़ते हुए कहा, ''हम विवाह के ख़िलाफ़ अपराध से संबंधित भारतीय दंड संहिता की धारा 497 और सी.आर.पी.सी. की धारा 198 को असंवैधानिक घोषित करते हैं।'' शीर्ष अदालत ने इस धारा को स्पष्ट रूप से मनमाना, पुरातनकालीन और समानता के अधिकार तथा महिलाओं के लिए समान अवसर के अधिकार का उल्लंघन करने वाला बताया। व्यभिचार को प्राचीन अवशेष क़रार देते हुए शीर्ष अदालत ने कहा कि मानव जीवन के सम्मानजनक अस्तित्व के लिए स्वायत्तता स्वाभाविक है और धारा 497 महिलाओं को अपनी पसंद से वंचित करती है। व्यभिचार आपराधिक कृत्य नहीं होना चाहिए, लेकिन इसे अभी भी नैतिक रूप से ग़लत माना जाएगा और इसे विवाह ख़त्म करने तथा तलाक़ लेने का आधार माना जाएगा। वैसे घरों को तोड़ने के लिए कोई सामाजिक लाइसेंस नहीं मिल सकता, लेकिन अब पति-पत्नी किसी दूसरे के साथ संबंध बनाए तो वह अपराध नहीं।

'Adultery Law Strips Woman Of Sexual Autonomy' में फ़ैसले के अंतर्गत -- ''A society which perceives women as pure and an embodiment of virtue has no qualms of subjecting them to virulent attack : to rape. honour killings, sex-determination and infanticide. As an embodiment of virtue, society expects the women to be a mute spectator to and even accepting of

egregious discrimination within the home.'' के कथन के साथ 77 पृष्ठों के 'वर्डिक्ट' में अलग से अपना फ़ैसला पढ़ते हुए जस्टिस चंद्रचूड़ ने कहा, ''अडल्ट्री क़ानून मनमाना है। यह महिला की सेक्सुअल चॉइस को रोकता है और इसीलिए असंवैधानिक है। महिला को शादी के बाद सेक्सुअल चॉइस से वंचित नहीं किया जा सकता।'' इस प्रकार तैंतीस साल पहले पिता जस्टिस वाई वी चंद्रचूड़ ने जो फ़ैसला दिया था, उसे उनके बेटे जस्टिस डी वाई चंद्रचूड़ ने पलट दिया। दरअसल, सुप्रीम कोर्ट के पूर्व जज जस्टिस वाई.वी. चंद्रचूड़ ने धारा 497 को सही ठहराते हुए फ़ैसला दिया था कि कुछ खास मामलों में अनुचित यौन संबंधों के लिए सज़ा का प्रावधान ज़रूर होना चाहिए। लेकिन उनके पुत्र ने उसे असंवैधानिक क़रार करते हुए कहा, ''आई.पी.सी. की धारा 497 लैंगिक भेदभाव पर आधारित है। शादी के बाद महिला की यौन संबंधी स्वायत्तता पर पति का एकाधिकार नहीं होता। यह दूसरी बार है जब उन्होंने अपने पिता के फ़ैसले को पलट दिया है। इससे पहले ए.डी.एम. जबलपुर 1977 के मामले में निजता के सिद्धांत पर भी अपना फ़ैसला अपने पिता के विचारों के विपरीत सुनाया था। जस्टिस वाई वी चंद्रचूड़ पाँच जजों वाली बेंच में से उन चार जजों में से एक थे, जिन्होंने तत्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा लगाए गए आपात्काल को सही ठहराया था। लेकिन बेटे ने कहा, ''जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता व्यक्ति के अस्तित्व से जुड़ी हुई चीज़ें हैं जिन्हें छीना नहीं जा सकता।'' इस प्रकार यह सिद्ध है कि किसी भी क़ानून की महत्ता उस देश-काल की स्थिति और परिस्थिति के संदर्भ में ही तय की जा सकती है।

इसी से ''Adultery cannot and should not be a crime'' घोषित करते हुए मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा ने साफ़ लफ़्ज़ों में कहा, 'संभव है कि व्यभिचार ख़राब शादी का कारण नहीं हो, बल्कि संभव है कि शादी में असंतोष होने का नतीज़ा हो।' न्यायमूर्ति मिश्रा ने कहा कि महिला के साथ असमान व्यवहार संविधान के कोप को आमंत्रित करता है। उन्होंने यह भी कहा कि समानता संविधान का शासकीय मानदंड है एवं स्त्री की देह पर उसका अपना हक़ है। कोर्ट ने आगे कहा कि यह उसका अधिकार है, उस पर किसी तरह की शर्तें नहीं थोपी जा सकती। एक महिला को समाज की मर्ज़ी के मुताबिक सोचने को मज़बूर नहीं किया जा सकता। इसीलिए मुख्य न्यायाधीश ने ज़ोर दिया -- ''that enforcement of forced female fidelity 'by curtailing sexual autonomy was an affront to the fundamental right to dignity and equality. लेकिन इसके बाद अगर पत्नी अपने लाइफ पार्टनर के व्यभिचार के कारण ख़ुदकुशी करती है, तो ऐसे केस में सबूत पेश करने के बाद पति पर ख़ुदकुशी के लिए उकसाने का मामला चल सकता है। जस्टिस ए.एम. खानविलकर ने कहा, ''अडल्ट्री किसी तरह का अपराध नहीं है, लेकिन अगर इस वजह से आपका पार्टनर ख़ुदकुशी कर लेता है, तो फिर उसे ख़ुदकुशी के लिए उकसाने का

मामला माना जा सकता है।'' उनके अनुसार अडल्ट्री, ''अनहैपी मैरिज़ का केस भी नहीं हो सकता, क्योंकि अगर इसे अपराध मानकर केस करेंगे, तो इसका मतलब दुःखी लोगों को सज़ा देना होगा।'' विश्व में चीन, जापान, ब्राजील और ऑस्ट्रेलिया आदि अधिकतर देशों में अडल्ट्री अपराध नहीं है, ये पूरी तरह निजता का मामला है। इसके अतिरिक्त, अमेरिका और यूरोपियन देशो में तो संस्कृति एवं पारिवारिक व्यवस्था भिन्न होने से स्त्री-पुरुष दोनों को वैचारिक और शारीरिक आज़ादी प्राप्त है। इसीलिए संविधान पीठ ने कहा, ''Most countries had abolished laws against adultery.''

संविधान पीठ ने कहा कि संविधान की ख़ूबसूरती यह है कि उसमें 'मैं, मेरा और तुम' शामिल है। शीर्ष अदालत में कहा कि महिलाओं के साथ असमानतापूर्ण व्यवहार करने वाला कोई भी प्रावधान संवैधानिक नहीं है और अब यह कहने का वक़्त आ गया है कि ''पति महिला का स्वामी नहीं है।'' संसद ने भी महिलाओं के ख़िलाफ़ घरेलू हिंसा पर क़ानून बनाया हुआ है। संविधान पीठ ने एकमत से व्यभिचार क़ानून को निरस्त करते हुए, 'Husband Not Master of Wife' की घोषणा की और महिला जस्टिस इंदु मल्होत्रा ने अपने फ़ैसले में कहा कि धारा 497 संविधान प्रदत्त मूल अधिकारों का स्पष्ट उल्लंघन है और इस प्रावधान को बनाए रखने का कोई तर्क नहीं है। उन के कथनानुसार, ''Women living under the shadow of husband have gone." or "Section 497 institutionalizes discrimination." and, "State cannot interfere by punishing man alone.'' स्मरण रहे कि शाइन की ओर से दायर याचिका में तर्क दिया गया था कि क़ानून तो लैंगिक दृष्टि से तटस्थ होता है लेकिन धारा 497 का प्रावधान पुरुषों के साथ भेदभाव करता है और इससे संविधान के अनुच्छेद 14 (समता के अधिकार), 15 (धर्म, जाति, लिंग, भाषा अथवा जन्म स्थल के आधार पर विभेद नहीं) और अनुच्छेद 21 (दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार) का उल्लंघन होता है। इस प्रकार याचिका की सुनवाई करते हुए स्त्री और पुरुष के बीच विवाहेत्तर संबंध से जुड़ी आई.पी.सी. की धारा 497 को पाँच जजों की पीठ ने एकमत से असंवैधानिक क़रार दिया। सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा की अगुवाई वाली पाँच जजों की संविधान पीठ में जस्टिस आर.एफ. नरीमन, जस्टिस डी.वाई. चंद्रचूड़, जस्टिस इंदु मल्होत्रा और जस्टिस ए.एम. खानविलकर शामिल थे।

उच्चतम न्यायालय के व्यभिचार को ग़ैर-आपराधिक घोषित करने वाले इस फ़ैसले की प्रतिक्रया में दिल्ली महिला आयोग की अध्यक्ष स्वाति मालीवाल ने असहमति और दुःख जताया है। उन्होंने जारी विज्ञप्ति में इस फ़ैसले पर पुनर्विचार करने की वकालत की और कहा, ''व्यभिचार को ग़ैर-आपराधिक घोषित करके उच्चतम न्यायालय ने इस देश के लोगों को शादी से बाहर अवैध संबंध रखने की खुली छूट दे दी है। माननीय उच्चतम न्यायालय को अवैध संबंधों को बिना लिंग भेद के महिला और पुरुष दोनों के लिए

आपराधिक करना चाहिए था। इसकी जगह उन्होंने व्यभिचार को ही ग़ैर-आपराधिक घोषित कर दिया।'' चूँकि पतियों के शादी के बाहर अवैध संबंध होते हैं और वे पत्नियों को छोड़ देते हैं, जिससे अकेले छोड़ देने पर सहारे के बिना ख़ुद का और बच्चों का पेट पालने में कितनी दिक़्क़त होती है? इसे रेखांकित करते हुए स्वाति ने यह भी कहा, ''पितृ सत्तात्मक समाज में महिलाओं के ऊपर अधिकार के भाव की वजह से पुरुष ख़राब वैवाहिक संबंधों के लिए महिलाओं को ज़िम्मेदार ठहराते हैं। इस परिदृश्य में व्यभिचार को ग़ैर-आपराधिक घोषित करना महिलाओं के दर्द को और ज़्यादा बढ़ावा देगा।'' उनके इस विचार से बहुत-सी महिलाएँ भी सहमत होंगी, किंतु इसमें उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं और उनके आत्माभिमान को देखना चाहिए। अभी तक शक़ और संदेह के आधार पर भी स्त्री सबके कोप और लाँछन की भागीदार बनती रही है, कोर्ट ने इस क़ानून के अंतर्गत स्त्री को मुखर होने का साहस और स्वाभिमान दिया है। वैसे भी ग़लत संबंधों को अपराध बोध से जीते हुए ढोने की बजाय, मुक्त होने के इस फ़ैसले को गहराई से देखने की ज़रूरत है।

इस संदर्भ में प्रख्यात साहित्यकार श्री प्रियदर्शन का मंतव्य दृष्टव्य है। उनके अनुसार, ''सुप्रीम कोर्ट के फ़ैसले को भी इसी कुत्सित नज़र से देखे जाने का अंदेशा है। बहुत सपाट ढंग से यह बात फैलाई जा सकती है कि अदालत ने विवाहेत्तर संबंधों की छूट दी है, जबकि अदालत ने ऐसा कुछ नहीं किया है। अदालत ने बस ऐसे किसी संबंध को जुर्म माने जाने से इनकार किया है। उसने वह धारा 497 हटा दी है जिसके तहत कोई पुरुष अपनी पत्नी के साथ किसी और के संबंध को लेकर उस पुरुष पर मुक़दमा कर सकता था। दिलचस्प यह है कि ऐसे मामलों में स्त्री पर मुक़दमा नहीं होता, क्योंकि वह व्यक्ति नहीं, संपत्ति या मिलकियत मान ली गई थी। सुप्रीम कोर्ट में मामला पहुँचा इसी गुज़ारिश के साथ था कि ऐसे रिश्तों के लिए स्त्री को भी दोषी माना जाए। लेकिन अदालत ने ज़्यादा विवेकशील दृष्टि अपनाते हुए स्त्री-पुरुष दोनों को ऐसे मामलों में मुज़रिम नहीं माना। उसने बेशक़ यह कहा कि ऐसे विवाहेत्तर संबंधों को तलाक़ का आधार बनाया जा सकता है। जो लोग इस फ़ैसले को पश्चिमी प्रभाव का असर बताते हुए विवाह संस्था के लिए ख़तरनाक मान रहे हैं, उन्हें समझना चाहिए कि विवाह संबंध को सबसे ज़्यादा ख़तरा रिश्तों की ग़ैर-बराबरी से है। अगर विवाह संस्था में दोनों बराबर न हो और स्त्री को पुरुष की मिलकियत बने रहना है तो फिर इस संस्था के होने का मतलब नहीं है।

दो बालिग लोगों का विवाह तभी सार्थक है जब दोनों के भीतर आपसी बराबरी और भरोसे का रिश्ता हो। सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला बस इस बात को सुनिश्चित करता है। ('क्योंकि संपत्ति नहीं है स्त्री', लेख)

वास्तव में महिलाओं को यह बराबरी अदालती फ़ैसले से हासिल नहीं होगी, क्योंकि

कई कड़वी सच्चाई हमारे सामने मौजूद हैं। एक तो यह कि सारे क़ानून मिलकर भी स्त्री को उसकी संवैधानिक हैसियत नहीं दिला पाए हैं। बहुत सख्त दहेज क़ानून के बावजूद दहेज के मामलों में कमी नहीं आई और घरेलू हिंसा विरोधी क़ानून के बावजूद घरों में औरतों की पिटाई नहीं रुकी। दफ्तरों में यौन उत्पीड़न रोकने का क़ानून बना, लेकिन इसके मामले लगातार सामने आ रहे हैं। बलात्कार पर फाँसी तक की सज़ा नियत हो गई, लेकिन बलात्कार की जैसी भयावह ख़बरें आ रही हैं। ये तथ्य बहुत से अन्य सवालों को जन्म देते हैं कि क्या वजह है कि इतने क़ानूनों के बावजूद स्थितियाँ नहीं बदल रही? इसके विपरीत यह भी एक भयावह सत्य है कि इन क़ानूनों का दुरुपयोग होने से समाज में नए क़िस्म का तनाव पैदा हो गया है। जैसे शादी-ब्याह में ख़र्च और दिखावा तो बढ़ता जा रहा है, किंतु दहेज क़ानून की आड़ लेकर लड़की के परिवार द्वारा झूठा इल्ज़ाम लगाकर लड़के वालों को फँसाया जा रहा है। इसी तरह 'डोमेस्टिक वाइलेंस' के क़ानून का सहारा लेकर तेज़-तर्रार लडकियाँ अपना उल्लू सीधा करने के लिए ससुराल वालों को फँसा रही है, जबकि वास्तव में ये अपराध करने वाले साफ़ बचे रहते हैं। आख़िर इस विरोधाभास का क्या कारण है कि झूठ पकड़ा नहीं जा रहा, जबकि सच्चाई पर फँदा कसा जा रहा है। इसके कारण हमारे समाज में तेज़ी से आए बदलाव और उसके नैतिक पतन में ढूँढ़ने होंगे। एक तो यह कि भारत में क़ानूनों का पालन कोई करना नहीं चाहता, दूसरे हमारा समाज नहीं बदल रहा तथा क़ानूनों से बचने या छिपने का कोई न कोई तरीका ढूँढ लेता है और विवाह में दहेज एवं पैसे ख़र्च करने के दूसरे रास्ते बना लिया गए हैं जिससे दहेज प्रथा में तो लगाम लगी नहीं, कई अन्य कुरीतियाँ या समस्याएँ पैदा हो गई हैं।

अब जबकि स्त्रियाँ बड़ी तेज़ी से बदल रही हैं, उनकी प्राथमिकताएँ घर-गृहस्थी के बाहर शिक्षा और नौकरी की ओर बढ़ रही हैं तो इसमें कोई शक नहीं कि उसे पहले के मुकाबले बहुत सारी छूट मिली है -- पढ़ाई में, नौकरियों में, खेलों और तमाम क्षेत्रों में उसकी मौजूदगी बढ़ी है और स्वीकृति भी।

यधपि सार्वजनिक जीवन में स्त्री की जगह और हैसियत बढ़ी है, किंतु उसका शोषण और दोहन अज़ीब तरीक़े से दुगुना हो गया है। देवालयों और वैश्यालयों की जगह धर्म गुरुओं के आश्रमों में यौनाचार हो रहे हैं। अभी पिछले दिनों 'मी टू' के माध्यम से भारत में भी स्त्रियों के यौनाचार की ख़बरें सोशल मीडिया पर 'हाई लाइट्स' हुई। हमने पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण करके विज्ञापनों में तो उसे देह मुक्त दिखाने की कोशिश की है, किंतु क्या हमारा समाज अपनी सोच में वह सब शामिल कर सका, जो पश्चिमी समाज में स्त्री-पुरुष की समानता में निहित है। उसकी निगाह में स्त्री के प्रति क्या लोलुपता और लम्पटता घटी है? जो पश्चिमी पुरुष की नज़र में दिखाई नहीं पड़ती। यहीं से वास्तविक

भेद शुरू होता है, जो हमारे समाज और क़ानून को पश्चिमी सभ्यता से भिन्न करता है। वास्तव में यह पुरातनता और आधुनिकता के बीच का संघर्ष है, जिसमे रूढ़ियों के साथ चलते हुए अति आधुनिकता की और बढ़ते क़दम हमारी गिरावट का कारण बन रहे हैं। इसीलिए गाँव-क़स्बे के स्तर पर जहाँ महिलाओं की स्थिति ज्यों-की-त्यों है, वही मेट्रो सिटीज़ में लेडीज़ 'मॉडर्न' बनने का फ़ायदा उठा अपने पारिवारिक दायित्वों से मुँह फेर रही हैं और यह तनाव और नैतिक पतन के साथ कलह और परिवार टूटने का एक बड़ा कारण बन रहा है।

अंत में हमें मानवीय रिश्तों और उसकी ज़रूरतों के बीच मनोवैज्ञानिक और अन्य कारणों को भी मद्देनजर रखते हुए जाँच करनी चाहिए। अपने फ़ैसले में जस्टिस चंद्रचूड़ ने भी साफ़ कहा था, ''Sexuality cannot be disassociated from human personality. For, to be human involves the ability to fulfill sexual desires in the persuit of happiness. Autonomy in matters of sexuality is thus intrinsic to a dignified human existence.'' कभी-कभी किन्हीं वजहों और विवाह पूर्व ग़ैर-संबंधों के कारण वह लगाव शादी के बाद में भी बना रहता है और उजागर होने पर स्त्री और पुरुष दोनों इसके दोषी माने जाते हैं। दूसरे, किसी कारणवश पति-पत्नी आपसी संबंधों से संतुष्ट नहीं होते या तनाव में होने से किसी अन्य महिला और पुरुष की तरफ़ आकर्षित होते हैं। इसके साथ ही किसी ख़ास रुचि या 'क्वालिटी' की वजह से कोई भी एक-दूसरे के प्रति खिंचाव महसूस कर सकता है जो कि ज़रूरी नहीं कि शारीरिक हो, वह मानसिक अभिरुचियों की समानता ही हो सकती है। जैसे किसी की साहित्य, संगीत या नृत्य में रुचि हो, किंतु पार्टनर का उसमें 'इंटरेस्ट' या सहयोग न हो। किंतु किसी अन्य से उस व्यक्ति को आगे बढ़ने का रास्ता मिला हो, तब यह मदद दोस्ती या नए रिश्ते को जन्म दे सकती है। लेकिन भारतीय समाज अभी तक स्त्री-पुरुष के इस ख़ालिस संबंध को स्वीकार नहीं करता और ऐसे में संदेह और आशंका के कारण कई अन्य अपराध हो जाते हैं। एक सच्चाई यह भी है कि विवाह के बाद भी मन का आकर्षण किसी और के प्रति हो सकता है। अब यह सबका व्यक्तिगत मामला है, जिसमे आदमी और औरत का ख़ुद का निर्णय ही संबंध का आधार है। ऐसे में सुप्रीम कोर्ट ने 497 क़ानून को निरस्त कर, स्त्री-पुरुष दोनों को इस भ्रमजाल से मुक्त किया है और उन्हें आज़ादी दी है कि वे अपनी अभिलाषाओं को पंख लगाकर अपराध-बोध के बिना खुले आकाश में उड़ाएँ। क्या यह संभव नहीं कि हम अपनी सोच को भी बंधन मुक्त करें? और इस क़ानून को आज़ाद नज़रिये से नापे; न कि दैहिक और नैतिक स्तर पर। अंततः इस उक्ति के माध्यम से मैं यही कहूँगी, 'RULES ARE MADE TO BE BROKEN' and 'LIFE IS MADE TO BE LIVED.'

❑

प्रेम प्रकाश मेहरा

सूचना का अधिकार : सभी तालों की चाबी

आर.टी.आई. से जानो फिर मानो। 12 अक्टूबर, सूचना अधिकार दिवस

लोकतंत्र में आप राजा होते हो, लेकिन यह आपकी भूल होती है कि आप अपने आपको प्रजा समझ लेते हैं। उसी का कारण है कि आप टूटी हुई सड़क पर सफ़र करते हो। बिजली, पानी का बिल देने के बाद भी बिजली पानी के लिए तरसते हैं। आख़िर क्यों?

सन् 1713 में किंग चार्ल्स 12वें ने अपने एक सभासद् को अधिकारियों को दंडित करने के लिए नियुक्त किया जो क़ानूनों का उल्लंघन करते थे। लोकपाल व्यवस्था से विश्व को परिचित कराने का श्रेय स्वीडन को जाता है। 1786 में पहली बार स्वीडन में ही सूचना का अधिकार लागू हुआ।

आज हमारे पास सूचना का अधिकार जैसा ब्रह्मास्त्र है जो बैनेट कॉल मैन बनाम भारत संघ (ए.आई.आर, 1973 ए.सी. 60), उत्तर प्रदेश बनाम राजनारायण (1975 एस. सी.सी. 428) आदि केसों द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) का दायरा बढ़ाया गया है। यह एक मौलिक अधिकार है। जनांदोलन के कारण एवं अरूणा राय जैसे सामाजिक कार्यकर्ताओं के काफ़ी प्रयासों के बाद हमारी संसद में 22 दिसंबर 2004 को एक विधेयक पेश किया जिससे संसद को सतत् समिति तथा मंत्रियों के समूह की संस्तुतियों को समायोजित करते हुए सौ से अधिक संशोधन द्वारा पारित किया गया है। जिसे लोक सभा में 11 मई, 2005 को पारित किया तथा राज्य सभा में 12 मई, 2005 को पारित किया गया। जिसे 15 जून 2005 को राष्ट्रपति की सहमति मिलने के बाद 12 अक्टूबर, 2005 को लागू किया गया। सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 का विस्तार जम्मू कश्मीर के सिवाय संपूर्ण भारत पर है। इसमें 6 अध्याय एवं 30 धाराएँ हैं। सूचना को धारा 2(च) में परिभाषित किया गया है -- ''किसी इलेक्ट्रॉनिक रूप में धारित अभिलेख, दस्तावेज़, ज्ञान, ई-मेल, मत, सलाह, प्रेस विज्ञप्ति, परिपत्र, आदेश,

लॉगबुक, संविदा, रिपोर्ट, काग़ज़ पत्र, नमूने, मॉडल, आँकड़ों संबंधी सामग्री और किसी प्राइवेट निकाय से संबंधित ऐसी सूचना सहित, जिस तक तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन लोक प्राधिकारी की पहुँच हो सकती है, किसी रूप में कोई सामग्री अभिप्रेत है।''

सूचना माँगने का सरल तरीका

सूचना माँगने के लिए 10 रुपए नकद शुल्क, बैंकर चैक, ड्रॉफ्ट या भारतीय पोस्टल ऑर्डर के माध्यम से शुल्क अदा किया जा सकता है। बी.पी.एल. कार्ड धारक को शुल्क से छूट प्राप्त है।

धारा 6 के अनुसार आपके द्वारा सूचना माँगने पर लोक सूचना अधिकारी का यह दायित्व है कि आपको 30 दिन के भीतर यह सूचना उपलब्ध कराए और सूचना किसी व्यक्ति के जीवन व स्वतंत्रता से जुड़ी है, तो 48 घंटे में उपलब्ध करवाए। यदि लोक सूचना अधिकारी आवेदन लेने से मना करता है, अस्वीकार करता है या ग़लत या भ्रामक सूचना देता है या अनावश्यक विलंब करता है या 30 दिन के अंदर सूचना उपलब्ध नहीं कराता है तो आप धारा 19 के प्रथम अपील कर सकते हैं। आवेदन के 30 दिन समाप्त होने के पश्चात् 30 दिन के अंदर अपील करनी होगी। प्रथम अपील का जवाब प्रथम अपील अधिकारी 45 दिन के अंदर नहीं देता है तो आप केंद्रीय सूचना आयोग या सूचना आयोग को 90 दिन के अंदर द्वितीय अपील कर सकते हैं। धारा 20 शास्ति (1) जहाँ किसी शिकायत या अपील का विनिश्चय करते समय, यथास्थिति केंद्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग की यह राय है कि यथास्थिति केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी ने किसी युक्तियुक्त कारण के बिना सूचना के लिए कोई आवेदन प्राप्त करने से इनकार किया है, या धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन सूचना के लिए विनिर्दिष्ट समय के भीतर सूचना नहीं दी है या असद्भावपूर्वक सूचना के लिए अनुरोध से इनकार किया है या जान-बूझकर ग़लत, अपूर्ण, या भ्रामक सूचना दी है या उस सूचना को नष्ट कर दिया है जो अनुरोध का विषय थी या किसी रीति से सूचना देने में बाधा डाली है तो वह ऐसे प्रत्येक के लिए, जब तक आवेदन प्राप्त किया जाता है या सूचना दी जाती है, दो सौ पचास रुपए की शास्ति आरोपित करेगा, तथापि ऐसी शास्ति की कुल रक़म पच्चीस हज़ार रुपए से अधिक नहीं होगी। धारा 8 के अनुसार इन स्थितियों में सूचना अधिकारी सूचना देने के लिए बाध्य नहीं है --

(क) सूचना जिसके प्रकटन से भारत की प्रभुता और अखंडता, राज्य की सुरक्षा, रणनीति, वैज्ञानिक या आर्थिक हित, विदेश से संबंध पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो, या किसी अपराध को करने का उद्दीपन होता हो।

(ख) सूचना जिसके प्रकाशन को किसी न्यायालय या अधिकारण द्वारा अभिव्यक्त रूप से

निषिद्ध किया गया है, या जिसके प्रकटन से न्यायालय का अवमान होता है।

(ग) सूचना जिसके प्रकटन से संसद या किसी राज्य के विधान मंडल के विशेषाधिकार का भंग होना कारित होगा।

(घ) सूचना जिसमें वाणिज्यिक विश्वास, व्यापार गोपनीयता या बौद्धिक संपदा सम्मिलित है, जिसके प्रकटन से किसी पर व्यक्ति की प्रतियोगी स्थिति को नुकसान होता, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है।

(ड़) किसी व्यक्ति को उसकी वैश्वसिक नातेदारी में उपलब्ध सूचना, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि प्रकटन के विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है।

(च) सूचना जिसको प्रकट करना किसी व्यक्ति के जीवन या शारीरिक सुरक्षा को ख़तरे में डालेगा या जो विधि प्रवर्तन या सुरक्षा प्रयोजनों के लिए विश्वास में दी गई जिसकी सूचना या सहायता के स्रोत की पहचान करेगा।

(छ) सूचना जिससे अपराधियों के अन्वेषण, पकड़े जाने या अभियोजन की क्रिया में अड़चन पड़ेगी।

(ज) मंत्रिमंडल के काग़ज़-पत्र जिसमें मंत्री परिषद्, सचिवों और अन्य अधिकारियों के विचार-विमर्श के अभिलेख सम्मिलित हैं।

- परंतु यह कि मंत्री परिषद् उनके कारण तथा वह सामग्री जिसके आधार विनिश्चय किए थे, विनिश्चय किए जाने और विषय के पूरा या समाप्त होने के पश्चात् जनता को उपलब्ध कराए जाएँगे।
- परंतु यह और कि वे विषय जो इस धारा में विनिर्दिष्ट छूटों के अंतर्गत आते हैं, प्रकट नहीं कए जाएँगे।

(झ) सूचना जो व्यक्तिगत सूचना से संबंधित है, जिसका प्रकटन किसी लोक क्रियाकलाप या हित से संबंध नही रखता है, या जिसमें व्यक्ति की एकांतता पर अनावश्यक अतिक्रमण होगा, जब तक कि यथास्थिति केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी या अपील प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना का प्रकटन विस्तृत लोक हित में न्यायोचित है।

इस सूचना अधिनियम को कहीं-न-कहीं सरकार द्वारा उपेक्षित किया जा रहा है। केंद्रीय सूचना आयोग एवं राज्य सूचना आयोग में कई महीनों से खाली पड़े रिक्त पदों के लिए उच्चतम न्यायालय को सरकार से जवाब-तलब करना पड़ा। सौ के लगभग सूचना कार्यकर्त्ताओं की शहादत के बावजूद भारत में सूचना का संघर्ष जारी है। आप नागरिक पहचाने इसकी ताक़त।

❑

डॉ. दीप्ति गुप्ता

संसद भवन की ख़ौफ़नाक दास्ताँ

यह बात तब की है, जब मैं मानव संसाधन विकास मंत्रालय, (शास्त्री भवन) नई दिल्ली, के शिक्षा-विभाग में कार्यरत् थी। उस समय शिक्षा सचिव, I.A.S अनिल बोर्डिया जी थे। उन्होंने एक दिन मुझे पार्लियामेंट में 'उच्च शिक्षा व प्रौढ़ शिक्षा' पर होने वाली बहस के महत्त्वपूर्ण तथ्यों को नोट करके लाने का कार्यभार सौंपा।

मैंने सोचा कि आज सौभाग्य से तत्कालीन सभी संसद सदस्यों और मंत्रियों के दर्शन हो जाएँगे और बहस का 'Live Show' भी देखने को मिलेगा। शास्त्री भवन से संसद भवन पास ही था। मैं समय से वहाँ पहुँच गई और विजिटर्स गैलरी में आगे की सीट पर, बड़े उत्साह से भरी हुई बैठ गई। धीरे-धीरे गैलरी पूरी तरह भर गई। विशालकाय एवं ऐतिहासिक संसद भवन जितना बाहर से ख़ूबसूरत, उतना ही अंदर से भी शानदार था।

सारे मंत्री और सांसद झक सफेद कुर्ते पायजामे में अपनी कुर्सियों पर विराजमान थे। (पता नहीं सबके दिल भी उतने ही सफ़ेद थे कि नहीं?)

किसी राजनीतिक विषय पर चर्चा चल रही थी। उसके तुरंत बाद 'शिक्षा' पर बहस होनी थी। हमारी गैलरी से पास वाली, सांसदों की पंक्ति में हँसती-मुस्कुराती रेणुका चौधरी बैठी हुई थीं।

एकाएक वे खड़ी हुईं और बिना माइक के ही बुलंद आवाज़ में जो उन्होंने विपक्ष पर चिल्लाना (Full Blast) शुरू किया तो मेरा तो जैसे दिल ही बैठ गया।

उधर से विपक्षी नेताओं ने धमधम धमधम...मेज़ पीटना शुरू कर दिया, तो तभी एक पुरुष स्वर लहराया -- ''रेणुका जी, आपके दहाड़ने से कुछ नहीं होने वाला''...

तो उसके पास वाला कोई चीखता हुआ बोला, ''चिंघाड़ना कहो, भाई चिंघाड़ना''।

देखते ही देखते वहाँ, एक हंगामे का माहौल पैदा हो गया। लहीम-शहीम देहधारी दबंग नेता उठ कर एक-दूसरे की तरफ़ हाथ चलाते और फेंकते हुए, बाँहे चढ़ा कर ऐसे

लग रहे थे कि बस अभी हाथापाई शुरू होने वाली हो। उधर उनकी आवाज़ें ऊँची होती जा रही थीं, इधर मेरी घबराहट बढ़ती जा रही थी। वह झगड़ा, शोर, चीख-चिल्लाहट इतनी लंबी चली कि नेता लोग शिक्षा पर होने वाली चर्चा का समय भी खा गए।

लोक सभा स्पीकर की कोई सुने ही नहीं। सब बच्चों से भी ज़्यादा भयंकर अनियंत्रत। एक सांसद ने तो छोटी फाइल जैसी कोई चीज़ अपनी सीट से बैठे-बैठे विपक्ष की ओर इतनी ज़ोर से फैंकी कि वह सबके सिर पर से होती हुई, संदन के बीचोंबीच Well of the House जाकर गिरी।

स्पीकर भी चिल्लाया -- Stop this nonsense....

पर उसकी कोई सुने, तब न। और इस भीषण युद्ध जैसे डरावने वातावरण में शून्यकाल आ गया, फिर भी, सांसदों की धमाचौकड़ी चलती रही। 1.00 बजे लंच ब्रेक हो गया। शिक्षा पर बहस कहीं शून्य में चली गई। मैं भारी सिर और भारी क़दमों से बाहर आई और ड्राइवर को खोजने लगी। तभी उसने दूर से देख लिया और वह कार लेकर तुरंत हाजिर हो गया। मैंने कहा -- पहले किसी कैमिस्ट शॉप पर चलो, सिर दर्द की दवा लेनी है! वहाँ से फिर मंत्रालय पहुँच कर, मैं पहले संयुक्त सचिव के कमरे में गई। वे बहुत सज्जन और सदय थे और दक्षिण भारत के ठेठ आंतरिक क्षेत्र से थे। इसलिए उन्हें हिंदी काम चलाऊ आती थी बोले -- "Deepti, come, come -- बताओ, पार्लियामेंट से क्या लाया??''

मेरे मुँह से अनायास निकला -- "Sir, Throbbing headache

वे सुनते ही मुस्कुराए भी और परेशान भी हुए, सिर दर्द से मेरे उतरे चेहरे को देख कर बोले -- "If you wish, you can take half day leave"

पर, मैंने मना कर दिया क्योंकि जब दो-ढाई घंटे मैं उस नरक में काट सकने की हिम्मत सिद्ध कर चुकी थी, तो, शेष कुछ घंटे मैं अपने शांत ऑफिस कक्ष में हल्का काम करते हुए बिता सकती थी। अतः आधे दिन की छुट्टी लेने का कोई औचित्य नहीं था। वैसे भी दवा मैंने ले ही ली थी। मैंने सचिव बोर्डिया साहब से हालाते-संसद बताए।

वे और उनके मातहत सभी IAS Officers संसद की इस तरह की अनुशासनहीनता और Noise pollution के भुक्त भोगी थे।

बहरहाल, उन्होंने भी मुझे आराम करने, कुछ कॉफी वगैरा पीने की हिदायत दी। वे बोले कि एक न एक दिन तो संसद का इस तरह का नजारा हम अफसरों को देखना ही पड़ता है। रिपोर्ट बनानी होती है और इस बेसुरे सुर पर संसद का अनुभव मेरे लिए एक दुःस्वप्न बन गया।

❑

कहानी

अरविंद जैन

बेड़ियाँ

अस्पताल के वार्ड नंबर 13 में घुसते ही अम्माँ दिखाई दे गईं। देखा कि वे बिस्तर पर बैठी-बैठी अख़बार के पन्ने फाड़-फाड़ कर किश्तियाँ और हवाई जहाज़ बना रही है। मुझे देखते ही बोलने लगी, ''हो गई तेरी पढ़ाई पूरी (बी.ए... एम.ए... पी.एचडी)....कोई लड़का पसंद हो..किसी भी जात-धर्म का हो.. मुझे बता...डरना मत...तेरे बाप और ख़ाप को मैं देख लूँगी। तुम हाथों में मेहंदी रचाओ... मैं तुम्हें दहेज में 'राफेल' हवाई जहाज़ दूँगी! मेरे सारे जेवर-कपड़े-रुपए लेकर हवाई जहाज़ में बैठ कर ससुराल जाना, दुनिया घूमना और जब मन हो मिलने आना।'' कहते-कहते सारे हवाई जहाज़ हवा में उड़ा दिए और किश्तियाँ पानी के गिलास में। बेहद बेबस सी मैं, अम्माँ को देखती-सुनती रही और हाँ में हाँ मिलाती रही।

सालों से अम्माँ का स्थायी पता है -- ''मेडिकल कॉलेज, मानसिक रोग विभाग, वार्ड नंबर 13, बेड नंबर 31।'' जीवन ही उल्टा-पुल्टा हो गया। बीच-बीच में कभी थोड़ा ठीक होती हैं तो घर ले आते हैं मगर कुछ दिन बाद फिर अस्पताल। अस्पताल में वे अकेली नहीं, उन जैसी बहुत-सी स्त्रियाँ हैं। सबकी कथा-कहानी, कमोबेश एक-दूसरे से मिलती-जुलती ही है। डॉक्टर ज्ञान के शब्दों में कहूँ तो 'बचपन से मानसिक दबाव-तनाव और रिमोट कंट्रोल' इन्हें सामान्य नहीं रहने देते। यहाँ सब दमित आकाँक्षाएँ भर्ती हैं। लछमी... सुरसती... दुर्गेश्वरी... पारो... लाजो... तुलसी... शांति...! डॉक्टर विद्यासागर के इस मंदिर को लोग अब ज्ञान का 'पागलखाना' कहते हैं।

सोचा था इस बार घर जाते ही अम्माँ को सब कुछ सच-सच बता दूँगी, लेकिन क्या मालूम था कि वे इस हाल में होगी। ठीक होती तो शायद बता ही देती, अपने 'ब्रांड न्यू बॉयफ्रेंड' और समुद्र किनारे बनाए रेशमी रेत के घरौंदों के बारे में। जानती हूँ अम्माँ तो सिर्फ़ 'हिज मास्टर'स वॉयस' है.....पापा ही चाबी भरते रहते हैं ''अपनी लाड़ली को कह देना... बता देना... समझा देना...!'' यूँ अम्माँ और मास्टर जी मुझे बेहद प्यार करते हैं, कितना तो सुनते-मानते हैं... और मैं हूँ कि...!

शादी से साल भर पहले छुट्टियों में आई, तो शाम को छत पर टहलते हुए अम्माँ बताने लगी ''तुम्हारी नानी अक्सर कहती थी सुनो राजकुमारी! पहले कढ़ाई, बुनाई, सिलाई, रसोई, बर्तन-भांडे, कपड़े-लत्ते, झाड़ू-पोंछा, साफ़-सफ़ाई करना तो सीख ले, फिर करती रहना पढ़ाई-लिखाई!'' मैंने थोड़ा खीझते हुए कहा, ''अम्माँ! उस समय पढ़ाई-लिखाई के लिए कस्बे में कोई एक 'कन्या पाठशाला' होगी, जहाँ अपना नाम, बाप का नाम और घर का अता-पता पढ़ना-लिखना सीख लो -- देवनागरी, गुरुमुखी या उर्दू में। कहाँ जाती डॉक्टर बनने?''

याद है बीस साल पहले घर के सामने बैंड-बाजा और बारात थे और छोटे चाचा अम्माँ को अस्पताल से एम्बुलेंस में लाए थे। वर माला, फेरे और विदा के समय गैंदे और गुलाब के फूलों से सजी 'बीएमडब्लयू' डोली में बैठने तक, अम्माँ गूँगी गुड़िया-सी बैठी रही। मैं रास्ते भर अम्माँ और अपने बारे में सोच-सोच रोती-सुबकती रही।

सासू माँ ने आरती, मुँह दिखाई और रस्म-रिवाज़ के बाद कहा ''सुनो बहू रानी! कुछ दिन घूम आओ, 'हनीमून' मनाओ।'' लौटने के बाद समझाने लगी ''बहुत हो गई मौज़-मस्ती, आज से रसोई सँभालो और खाना बना कर तो दिखाओ।'' अगले हफ़्ते फेरा डालने पीहर गई, तो अम्मा गुमसुम-सी कमरे में लेटी रही। कितनी कोशिश की मगर पहचाना तक नहीं।

अगले दिन लौटी तो सूचना मिली कि कामवाली गई लंबी छुट्टी पर। आदेश हुआ ''कल से कपड़े-लत्ते, बर्तन-भांडे और झाड़ू-पोंछा, साफ़-सफ़ाई करो-कराओ।'' पीछे से आकाशवाणी ''कब तक करेंगे नई बहू के लाड़-चाव, अब ढंग से अपना घर बसाओ।''

पति देव घावों पर मरहम लगाते ''नौकरी करनी है तो सुबह उठ कर, घर का काम निपटाओ और दफ्तर जाओ।'' मुझे लगता नमक छिड़क रहे हैं। सबके लिए समान क़ानून संहिता ''जो भी कमाओ, सास के पास जमा करवाओ।'' हाँ! 'खर्चा-ए-पानदान' (कम-ज़्यादा) हैसियत के हिसाब से ही मिलेगा। ससुर जी (रिटायर्ड बैंक मैनेजर) का स्थायी उपदेश ''जो करदा है सेवा, ओहणू मिलदी मेवा।'' मन करता पूछूँ, ''पापा जी! जिसे मेवा खाने का शौक ना हो तो...''

साल भर बाद ही पीहर से ससुराल तक में सुन रही हूँ ''परिवार बढ़ाओ, 'हम दो, हमारे दो' (एक बेटा अनिवार्य!)।'' घर से बाहर निकलो तो शहर के हर चौराहे पर बड़े-बड़े बोर्ड लगे हैं ''छोटा परिवार, सुखी परिवार।'' फ़ोन पर हर कोई रोज़ नया पाठ पढ़ाते हैं ''बच्चे जब तक स्कूल जाने लायक हों, तब तक नौकरी से छुट्टी ले लेना। ना मिले तो छोड़ देना नौकरी, दूसरी ढूँढ लेना। बच्चे की देखभाल (गू-मूत) कौन करेगा?'' मैं बड़बड़ाती रहती हूँ ''सबको घर में, खिलौने चाहिए खिलौने! झल्लाती रहती हूँ ''मिट्टी भी देह बन कर तो नहीं रह सकती, कोख़ से कब्र तक के सफ़र में।''

यूँ होते-होते मैं प्रतिष्ठा एम.ए. (मनोविज्ञान) उर्फ अनाम राजकुमारी उर्फ बहू रानी

से मिसरानी, 'जॉबवाली', कामवाली और दो बच्चों का 'गू-मूत' ही नहीं, बाथरूम तक साफ़ करने वाली 'भंगन' बन-बना दी गई हूँ। डिग्रियों को दीमक खा रही है और किताबों को चूहे कुतर रहे हैं। जेवर बनते-टूटते रहते हैं और साड़ियाँ संदूक की शोभा बढ़ा रही हैं।

दोनों बच्चे पढ़ने-लिखने विदेश चले गए और सास-ससुर समय से पहले ही, अंनत यात्रा पर निकल गए। पतिदेव 'पेट्रोल पंप' से देर रात खा-पी कर आते हैं और लेटते ही खर्राटें भरने लगते हैं। मायके में अम्माँ हैं, कभी घर और कभी वार्ड नंबर 13 में। अक्सर ऐसा महसूस होता है कि मैं भी अम्माँ की तरह पगला जाऊँगी। अब तो रोज़ रात एक चीख, सन्नाटे से शून्य तक में गूँजती रहती है।

रात आँखों में मँडराती रही और सुबह से ही मन उचाट है। अम्माँ से मिलने अस्पताल पहुँची तो 'इमरजेंसी वार्ड' के सामने से गुज़रते हुए इतिहास ने याद दिलाया 'आप यहाँ उस दिन-साल पैदा हुई थी, जिस दिन-साल देश में 'इमरजेंसी' लगी थी।'' वार्ड नंबर 13 पहुँची तो देखा अम्माँ दरवाज़े पर ही पंचायत की अध्यक्षता कर रही है। एक के बाद एक मुक़दमा सुनती और फ़ैसला सुनाती हुई अम्माँ, साक्षात् न्याय की देवी लग रही है।

मैं दूर बैठी अम्माँ को देख-सुन रही हूँ... ''आर्डर! आर्डर! दरोगा जी! इसे बोलना सिखाओ... उसे होस्टल छोड़ कर आओ... इसकी बिल्ली जैसी आँखों वाली मम्मी को बुलाओ... उसके शराबी बाप को ढूँढ़वाओ... गुलाब वाटिका में 'कैक्टस' उगाओ..और दरोगा! तुम घूस नहीं घास खाओ... सुधर जाओ वरना चूहों वाले पिंजरे में बंद करवा दूँगी ...सुन रहे हो न!!'' दरोगा बनी औरत ने हाथ जोड़ सिर झुकाया और कहती रही 'यस मैम.. यस!''

पंचायत ख़त्म हुई तो मैंने पूछा ''अम्माँ! कैसी हो?'' सुनते ही बोली ''दिखता नहीं... अंधी हो या नई आई हो? अपने बिस्तर पर जाकर चुपचाप सो जाओ। बिना सोचे बहुत बोलती है... हूँ!''

डॉक्टर ज्ञान से मिली तो बताने लगे ''कल देखने गया तो कहने लगी डॉक्टर साब यह मेरी वसीयत है... संभाल कर रखना, किसी को भी मत बताना-दिखाना! मैंने अपनी देह इस अस्पताल को दान कर दी है। मरने के बाद खोपड़ी खोलना, लॉकर की एक चाबी मिलेगी।''

लौटते समय लगा कि समय की सुनामी में किश्तियाँ डूब रही हैं और मैं समुद्र किनारे रेशमी रेत के घरौंदे बनाते-बनाते, काग़ज़ी हवाई जहाज़ में सवार सृष्टि के फेरे लगा रही हूँ।

❑

डॉ. शकुंतला कालरा

पारिवारिक मूल्य : बच्चे और आप

बच्चों का व्यक्तित्व अपने परिवार की पहचान है। परिवार यानि माता-पिता बच्चे के व्यक्तित्व-निर्माण की पहली पाठशाला है। उसमें भी 'माँ' की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण है। अगर माता-पिता अपने बालक से प्रेम करते हैं और उसकी अभिव्यक्ति भी करते हैं, उसके प्रत्येक कार्य में रुचि लेते हैं, उसकी इच्छाओं का सम्मान करते हैं तो बालक में उत्तरदायित्व, सहयोग, सद्भावना आदि सामाजिक गुणों का विकास होगा और वह समाज के संगठन में सहायता देने वाला एक सफल नागरिक बन सकेगा। अगर घर में ईमानदारी, सहिष्णुता, सहयोग का वातावरण है तो बालक में इन गुणों का विकास भली-भाँति होगा, अन्यथा वह सभी नैतिक मूल्यों को ताक पर रखकर मनमानी करेगा और समाज के प्रति घृणा का भाव लिए समाज-विरोधी बन जाएगा।

बच्चे मानवता की दिव्यतम निधि हैं। इनके लालन-पालन में स्नेह एवं मार्ग-दर्शन में विवेकपूर्ण दृष्टि तथा दूरदर्शिता की आवश्यकता रहती है। माता-पिता बच्चों के व्यक्तित्व और चरित्र दोनों को प्रभावित करने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। बच्चों के व्यक्तित्व-निर्माण में सबसे पहला कार्य 'माँ' का है, दूसरे नंबर पर 'पिता' का, तीसरे स्थान पर 'गुरु' का और चौथे स्थान पर 'संगति' का जिनके साथ वह उठता-बैठता है। माँ से सीखे 'संस्कार' आगे तक चलते हैं। संतान जब माँ की कोख में होती है, उसी समय से संस्कार शुरू हो जाते हैं। जैसा माँ सोचती है, बच्चा भी उन्हीं भावनाओं और संवेदनाओं से युक्त होता है। महाभारत में एक प्रसंग आता है जहाँ अर्जुन पुत्र अभिमन्यु अपनी माता उत्तरा के गर्भ में चक्रव्यूह भेदन की कला सीख जाता है। यानी सीखने की कला का आरंभ तभी से हो जाता है जब वह गर्भ में होता है। इसी प्रकार अच्छे संस्कारों की नींव भी बालक में तभी से पड़ जाती है। नैतिकता चरित्र का ऐसा गुण है जो मनुष्य को मनुष्य बनाता है। उसे मनुष्यता प्रदान करता है। उसे सुदृढ़ एवं उज्ज्वल व्यक्तित्व प्रदान करता है।

सन् 1979 में 'अंतर्राष्ट्रीय बालदिवस की घोषणा हुई थी। उसके बाद दुनिया-भर के देशों में बाल-विकास के कार्यक्रमों में तेज़ी आई। बालकों के प्रशिक्षण के अनेक कार्यक्रम चले। अनेक संस्थाएँ भी इस दिशा में निरंतर कार्य कर रही है। अपने देश में 'बालभवन' और 'विज्ञान प्रसार' जैसी संस्थाएँ बच्चों को नई सदी के लिए तैयार करने में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। 'राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस' भी बाल-विकास के उद्देश्यों को लेकर बनाई गई है जिसमें ग्रामीण बच्चों और विभिन्न राज्यों से व्यापक स्तर पर लड़कियों के विकास के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। 'यूनीसेफ' विश्व की सबसे बड़ी बाल-कल्याण एवं विकास की संस्था है। देशव्यापी और अंतर्राष्ट्रीय कार्यों से पूर्व पारिवारिक स्तर पर बच्चों की देखभाल उसकी शिक्षा-दीक्षा और उनकी ज़रूरतों को समझने की आवश्यकता और भी ज़्यादा है। परिवार की बच्चे के व्यक्तित्व-विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वह उसे सफल सामाजिक जीवन के लिए तैयार करता है। यह उसे प्रारंभिक प्रशिक्षण प्रदान करता है। बच्चे के व्यक्तित्व पर सबसे पहली छाप माता-पिता की ही पड़ती है। 'बर्ने' कहते हैं कि इसे दुर्भाग्य कहें या सौभाग्य मनुष्य के जीवन में बचपन का वह काल अपरिहार्य है, जब उसका दिमाग, ज्ञान, विचार सब कुछ उसके माता-पिता द्वारा रचा जाता है। वह माता-पिता द्वारा दिए गए संस्कारों में ढल जाता है। परिवार बच्चों को सांस्कृतिक मान्यताओं (Cultural Values) को सिखाने का माध्यम है। परिवार वह आधारभूत संस्था है जो समाज में नियंत्रण लाने का मूल स्रोत है। परिवार यानि माता-पिता। बच्चों के व्यक्तित्व-निर्माण में संतोषजनक पारिवारिक जीवन अत्यंत आवश्यक है।

व्यक्तित्व-विकास में वंशानुक्रम (Heredity) तथा परिवेश (Environment) दो प्रधान तत्त्व हैं। वंशानुक्रम व्यक्ति को जन्मजात शक्तियाँ प्रदान करता है। परिवेश उसे इन शक्तियों को सिद्धि के लिए सुविधाएँ प्रदान करता है। बालक के व्यक्तित्व पर सामाजिक परिवेश प्रबल प्रभाव डालता है। ज्यों-ज्यों बालक विकसित होता जाता है, वह उस समाज या समुदाय की शैली को आत्मसात् कर लेता है, जिसमें वह बड़ा होता है व्यक्तित्व पर गहरी छाप छोड़ते हैं। आज समाज में जो वातावरण बच्चों को मिल रहा है, वहाँ संस्कारप्रद मूल्यों के स्थान पर भौतिक मूल्यों को महत्त्व दिया जाता है, जहां एक अच्छा इंसान बनने की तैयारी की जगह वह एक धनवान्, सत्तावान्, समृद्धिवान् बनने की हर कला सीखने के लिए प्रेरित हो रहा है ताकि समाज में उसका एक 'स्टेट्स' बन सके। माता-पिता भी उसी दिशा में उसे बचपन से तैयार करने लगते हैं। भौतिक सुख-सुविधाओं का अधिक से अधिक अर्जन ही व्यक्तित्व-विकास का मानदंड बन गया है। आत्म-संयम, सेवा-भावना, कर्तव्य-बोध, श्रम, त्याग, समर्पण आदि गुणों के तंतुओं से बना सादा जीवन उसका आदर्श नहीं रहा। आज आवश्यकता इस बात की है कि बच्चों को सही प्रेरणा, सही मार्ग-दर्शन व सही परामर्श के साथ स्वस्थ पारिवारिक एवं सामाजिक वातावरण मिले। हमारी यह ज़िम्मेदारी है कि बालकों और किशोरों की ऊर्जा व क्षमता को सही रचनात्मक दिशा दें

ताकि वे भौतिक व आत्मिक विकास में संतुलन बनाने की कला सीख सकें। संस्कारित बन सकें।

बच्चों को सकारात्मक सोच भी परिवार से मिलती है। जिस परिवार में बच्चों को सकारात्मक ऊर्जा मिलती है उन बच्चों में आत्म-दृढ़ता और आत्मानुशासन स्वतः विकसित हो जाता है। जिस परिवार के सदस्य आशावादी होंगे वे बच्चे कभी भी असफलता से निराश नहीं होंगे। बच्चों को समझाना माता-पिता का कर्त्तव्य है कि रेस में भाग लेना महत्त्वपूर्ण है हारना या जीतना नहीं। हमारा यह नैतिक दायित्व बनता है कि हम बच्चों में निराशा की भावना कभी पनपने न दें। आशा बच्चों के लिए अमृत है। यह वह संजीविनी बूटी है जिसके सेवन से मृत व्यक्ति में पुनः प्राणों का संचार हो जाता है।

कुछ परिवारों में बच्चों के बालसुलभ क्रियाकलापों पर हर समय रोक-टोक की जाती है। अच्छे परिवार बच्चों पर प्रभुत्व नहीं जमाते। बच्चे पर माता-पिता की ओर से किया गया अतिप्रभुत्व संतान में भय एवं असुरक्षा की भावना उत्पन्न करता है। बच्चे के अपने विचार और आवश्यकताएँ होती हैं, जिन्हें माता-पिता को समझना होगा। कड़ा अनुशासन भविष्य में आक्रामकता की भावना को जन्म देता है। अच्छे और समझदार माता-पिता बच्चों की हर समस्या को प्रेमपूर्वक सुनते हैं और यथासंभव समाधान भी निकालते हैं। बच्चों के प्रति उनका रवैया संवेदनषील होता है कठोर नहीं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक बॉवर के अनुसार, ''वे बच्चे जो घर में स्नेह की शिक्षा नहीं पाते हैं वे प्रायः दूसरों पर विश्वास नहीं कर पाते। वे पहले से ही आहत रहते हैं और दूसरा पीड़ादायक अनुभव नहीं चाहते।'' यकीन मानिए आपके धन-संपत्ति के भंडार से वह इतना सुखी व सफल नहीं होगा जितना आपके स्नेहिल स्पर्श व अपनत्व से पूर्ण आपके मीठे बोल उसे सुखी, सम्मानित जीवन देने में सहायक होंगे।

बालक हर आयु में माता-पिता का स्नेह, दुलार और प्रोत्साहन चाहता है। वह अपने हर कार्य की प्रशंसा चाहता है। यदि ऐसा नहीं होता तो वह समस्यामूलक व्यवहार प्रदर्शित करने लगता है। यह स्थिति उस समय और भी विकट हो जाती है जब किसी कार्य के करने पर प्रशंसा के स्थान पर उसे प्रताड़ना मिलती है, पुरस्कार के स्थान पर उसे दंड मिलता है। प्रोत्साहन के स्थान पर उसका मनोबल गिराया जाता है। तब उसे ऐसा लगता है कि उसे कोई स्नेह नहीं करता तो वह निराश हो उठता है यह स्थिति उस बालक के साथ दुर्भाग्यपूर्ण होती है।

माता पिता को चाहिए कि वे बच्चों पर अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ, अपने सपने न थोपें। बच्चा स्वयं कुछ और चाहता है और परिवार या समाज उससे कुछ और अपेक्षा रखता है। यह दशा बालक को कुंठित एवं चिंतित करती है। डॉक्टर, इंजीनियर या चार्टर्ड एकांउटेंट बनना अथवा प्रशासनिक सेवा में जाना मात्र ही तो उनके जीवन का लक्ष्य नहीं माना जा सकता। आज बहुत से और क्षेत्र खुले हैं जिनमें उनकी प्रतिभा अधिक अच्छी तरह से

प्रकट हो सकती है। अतः अपनी अपेक्षाओं के अनुरूप उसे ढालने की कुचेष्टा कदापि न करें अन्यथा तनाव की मुक्ति की राह ढूँढ़ते बालक में कोई संवेगात्मक व्यवहार पनपने लगेगा।

माता-पिता को चाहिए कि बच्चों की भावनाओं और उनके विचारों का उचित सम्मान करें। सबके सामने बच्चे की निंदा मत कीजिए। कुछ माता-पिता दूसरों के सामने बच्चे को अपमानित कर उसके बाल-हृदय को और ठेस पहुँचा देते हैं। उसका तिरस्कार मत कीजिए। कभी-कभी माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्य उसका न केवल मज़ाक उड़ाते हैं, वरन् व्यंग्यपूर्ण भाषा का प्रयोग भी करते हैं। ऐसे में बालक और संवेदनशील हो जाता है जिसका भयंकर परिणाम यह होता है कि वह अपने को सामाजिक-संपर्क से बिल्कुल काट लेता है।

आज सांस्कृतिक परिवर्तन इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जिस तरह बच्चों के मन-मस्तिष्क को प्रदूषित कर रहा है वह भारत ही नहीं सारे विश्व के समाजशास्त्रियों एवं चिंतकों के लिए चिंता का विषय है। फिल्मों में बढ़ती हिंसा, अपराध के नए-नए तरीक़े, क्रूरता, नफ़रत, भौंडा अंग-प्रदर्शन तथा 'केबल' संस्कृति के प्रभाव स्वरूप विदेशी चैनल तथा विदेशी फिल्मों में परोसे खुले सेक्स द्वारा जो सांस्कृतिक अवमूल्यन का प्रचार हो रहा है क्या हम अपने बालकों को, अपनी भारतीय संस्कृति को बचाने में समर्थ हो पाएँगे? इस संबंध में एक शिक्षक एवं बाल साहित्यकार के रूप में बालकों की ये चुनौतियाँ मुझे सदा उद्विग्न और चिंतित करती रही हैं और किसी भी अभिभावक के मन-मस्तिष्क को आंदोलित करती है। इनके समाधान क्या हो सकते हैं? ये कई सवाल हैं। बच्चे संस्कारी कैसे बनें? उनका सर्वांगीण विकास कैसे हो? माता-पिता, शिक्षक इसमें किस प्रकार सहयोग दे सकते हैं? तेज़ी से विकसित होती प्रौद्योगिकी और संचार क्रांति के प्रभाव से बच्चों को बचा पाना क्या संभव होगा? क्या उन्हें हम ऐसा व्यकित्व प्रदान कर पाएँगे जिसमें नैतिकता हो, जीवन-मूल्य हों, मर्यादा और संस्कार हों।

अतः कहा जा सकता है कि बच्चों को उत्तम संस्कार प्रदान कर उनके चरित्र-निर्माण में परिवार की अहम भूमिका है। जिस देश में बच्चे को उसके परिवार ने बालकों को नैतिकता की सुदीर्घ परंपरा दी है, उन्हें संस्कार दिए हैं, उस देश के बालकों की आँखों में करुणा की झलक होगी, मन में उत्साह, सोच में अहिंसा, भाषा में संयम, शील, सत्य की सुगंध होगी, हाथों में पुरुषार्थ और पैरों में लक्ष्य तक पहुँचने की गतिशीलता प्रति क्षण उनकी प्रेरणा बनेगी। इसमें कोई संदेह नहीं।

❑

डॉ. वेद प्रकाश

सरकारी कर्मचारियों की छंटनी और सामाजिक समस्या : एक नैतिक मूल्यांकन

देश में सरकारी कर्मचारियों की उनके सरकारी कार्यों को निष्पादित करने की आदत में सुधार लाने की दृष्टि से ही सरकार अपने उन कर्मचारियों की छंटनी करने को मज़बूर हो रही है जो काम करना नहीं चाहते तथा दूसरे कर्मचारियों को काम करने में बाधा उत्पन्न करने का काम भी करते हैं। जो कर्मचारी काम नहीं करते हैं अथवा किसी अपराधिक गतिविधि में लिप्त रहते हैं, उनकी छंटनी करने से संभवतः --

- बेरोज़गारों के लिए उनके योग्य काम-धंधों के रूप में नई नौकरियों सृजित करने में सहायता मिल सकती है।
- जो सरकारी कर्मचारी काम नहीं करते हैं उनके मासिक वेतन पर होने वाले व्यय को कम किया जा सकता है।
- दूसरे कर्मचारियों को काम को करने में बढ़ावा मिलने के आसार बनेंगे।
- कर्मचारियों में सरकार का एक प्रकार के भय बना रहेगा, आदि।

आज सरकार भी समय से पूर्व ही उन कर्मचारियों की छंटनी (जो काम करते नहीं, आदि के कारण) भी कर रही है --

- जिनके जीवन का अंतिम पड़ाव है जिसमें अक्सर ज़्यादातर लोग बीमार हो ही जाते हैं तथा जिन्हें अपने इलाज़ के लिए ज़्यादा पैसों की अवश्यकता भी होती है।
- जिन्हें अपनी बिन ब्याही बेटी की शादी की व्यवस्था करना अभी शेष है।
- जिन्हें अपने जवान बच्चों के लिए काम धंधों की व्यवस्था करवाने में उनकी मदद करनी अभी शेष है।
- जिन्हें अपने परिवार के अपने माता-पिता के इलाज़ के लिए अभी पैसों की सख़्त ज़रूरत पड़ सकती है।
- जिन्हें अपने परिवार की ज़रूरतों को अभी पूरा करना अभी शेष है, आदि।

सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों की छंटनी करने के उद्देश्य से भारत सरकार के डी.ओ.पी.टी. ने कार्यालय ज्ञापन सं. 25013/1/2013 इएसटीटी (ए), दिनांक 21 मार्च, 2014 एवं कार्यालय ज्ञापन सं. 25013/01/2013 इएसटीटी ए-4, दिनांक 11 सितंबर, 2015 को जारी करके सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों की छंटनी करने के लिए अपनी सरकारी मोहर लगा दी है जिसमें ऐसे कर्मचारी भी शामिल हो गए हैं जिन्हें सेवानिवृत्ति के बाद कोई पेंशन नहीं मिलती है।

सरकारी कर्मचारी काम नहीं करते हैं इस कारण सरकारी कार्यालयों में उन कर्मचारियों की छंटनी करने का सरकार का यह निर्णय कितना न्याय संगत होगा, इसे समय पर ही छोड़ देना उचित होगा किंतु व्यावहारिक निर्णय तो यह होना चाहिए कि यदि कर्मचारियों की सेवा-निवृत्ति की आयु को ही कम कर दिया जाए, लेकिन किसी सरकारी कर्मचारी के सरकारी कार्यकाल में उसकी न्यूनतम सेवा अवधि तो तय करनी ही चाहिए। कई प्रकार की नियुक्तियों के मामले में तो सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों की नियुक्ति तो 35 वर्ष तक की आयु को प्राप्त होने के बाद तक होती है।

यह विचारणीय होगा कि यदि कर्मचारी की सेवानिवृत्ति की आयु पूर्ण होने से पहले ही उसे सेवानिवृत्ति प्रदान करना उस स्थिति की तरह हो सकता है कि जिसमें एक यात्री ने रेल का टिकट किसी जगह जाने तक के लिए लिया था कि अचानक ट्रेन में टी.टी. आया और उसने उक्त यात्री को आगे ले जाने से केवल इसलिए मना कर दिया क्योंकि उसको ठीक से बैठना ही नहीं आता था या यूँ कहें कि किसी ने उक्त व्यक्ति को ठीक से बैठना ही नहीं सिखाया था, अतः उसको ठीक से बैठना नहीं आने के कारण रेल में सवार अन्य सहयात्रियों को असुविधा हो रही थी।

कर्मचारियों की सेवानिवृत्ति की आयु पूर्ण होने से पहले ही कर्मचारियों को सेवानिवृत्ति प्रदान करने से कोई भी व्यक्ति सरकार के इस निर्णय के विरुद्ध --

- असहिष्णु बन सकता है।
- सरकार में अन्य सहकर्मियों की तुलना में अपना अपमान मानते हुए अपनी एवं अपने आश्रितों तक की हत्या भी कर सकता है।
- अपनी मूलभूत ज़रूरतों की पूर्ति करने के लिए किसी भी देश-द्रोही से मिल सकता है, आदि।

यह अलग बात होगी कि सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों की छटनी करते समय छंटनी किए जाने वाले कर्मचारी के निम्नलिखित के बारे में ध्यान नहीं रखा जा सका हो --

- जाति एवं धर्म,
- उसकी सामाजिक स्थिति,

- उसकी आर्थिक स्थिति,
- उसकी पारिवारिक स्थिति, आदि।

इसके अलावा, सरकार को वस्तु एवं व्यक्ति में तो फ़र्क़ करना ही चाहिए। व्यक्ति कोई लकड़ी नहीं है जिसे ज़रूरत के हिसाब से प्रयोग किया जा सकता हो। व्यक्ति अपनी निश्चित सेवाओं के बदले मज़दूरी के रूप में वेतन प्राप्त करता है, यदि ग़लती से सरकार में कोई ऐसा व्यक्ति भर्ती हो गया है कि वह न तो काम करता है और न ही दूसरों को काम करने देता है, या ऐसे कृत्य करता पाया जाता है जो अपराधिक प्रकृति के हो, आदि, ऐसे हालातों के लिए उक्त कर्मचारी के साथ-साथ उक्त कर्मचारी के पर्यवेक्षक को भी ज़िम्मेदार माना जाना चाहिए जो --

- कर्मचारी से काम लेना ही नहीं चाहता हो, अथवा
- पर्यवेक्षक कर्मचारी की गतिविधियों पर उद्देश्य परक निगरानी करने में समर्थ नहीं हो।
- पर्यवेक्षक कर्मचारी के साथ अमानवीय व्यवहार करना चाहता हो।
- पर्यवेक्षक आपने किसी स्वार्थ पूर्ति के लिए योजनाबद्ध षड्यंत्रकारी अपनाकर कर्मचारी को क्षति पहुँचाना चाहता हो।
- पर्यवेक्षक कर्मचारी के मन में किसी प्रकार का भय व्याप्त करने का प्रयास करता हो।
- पर्यवेक्षक उक्त कर्मचारी से व्यक्तिगत सेवा ज़्यादा लेता हो।
- पर्यवेक्षक को कर्मचारी को काम बताना ही नहीं आता हो, आदि।

यहाँ यक्ष प्रश्न यह उठता है कि जब कोई व्यक्ति संपूर्ण प्रक्रिया, जैसे-षिक्षा, कार्य अनुभव, स्वाथ्य जाँच, आदि, के पूरी होने के बाद सरकारी नौकरी में कुछ समय के लिए प्रोबेशन पर भर्ती होता है और बाद में सब ठीक पाए जाने पर उक्त नए भर्ती हुए व्यक्ति को नियमित किया जाता है। तब बाद में वह कर्मचारी --

- नकारा कैसे हो जाता है।
- कोई भी ऐसे ही तो नकारा नहीं हो जाता है, आख़िर कोई तो कारण रहे होंगे, आदि।

यदि ऐसा है तो इस विषय पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता होगी।

यदि कोई कर्मचारी सरकारी की नौकरी में नियमित हो जाने के बाद नकारा हो जाता है, तो इसके पीछे संभवतः निम्नलिखित संभावित कारण हो सकते हैं --

- कर्मचारी को बिना वजह प्रशासन द्वारा परेशान किया जाता हो।
- पर्यवेक्षक को कर्मचारी द्वारा निष्पादित कार्यों का पूरा ज्ञान नहीं हो।
- कर्मचारी की पदोन्नति में समस्याएँ उत्पन्न की गई हों अथवा उससे कनिष्ठ को पदोन्नति प्रदान करना,

- कर्मचारी की वरिष्ठता सूची को ही बिगाड़ दिया हो, आदि।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि जब कोई कर्मचारी एक अवधि के लिए नौकरी पर भर्ती हो जाता है, तब बीच में ही उसे पैदा किए गए कारणों और माहौल के कारण समय से पूर्व ही उसकी सेवाएँ लेना बंद कर देना न्याय संगत नहीं होगा। छंटनी किया गया कोई भी कर्मचारी बाद में यदि अपनी मूलभूत ज़रूरतों को पूरा करने के लिए कोई अपराध रूपी कृत्य करने को मज़बूर होता है तब ऐसे में उक्त कर्मचारी की ग़लती बताकर उसके विरुद्ध क़ानूनी कार्रवाई करना कितना न्याय संगत हो सकता है -- यह एक जाँच का विषय तो अवश्य ही होना चाहिए।

एक ओर सरकार को किसी कर्मचारी को उसकी छंटनी करने के लिए मज़बूर होना पड़ता है तो वहीं छंटनी किए जाने वाले कर्मचारी की भी नैतिक ज़िम्मेदारी होनी ही चाहिए कि वह सरकार के समक्ष ऐसे कोई भी हालात उत्पन्न नहीं करने चाहिए जिससे सरकार को उसकी छंटनी करना आसान हो सके। यदि कोई कर्मचारी चाहता है कि सरकार समय से पूर्व उसकी छंटनी नहीं करे तो कर्मचारी की भी नैतिक ज़िम्मेदारी होनी चाहिए कि वह --

- उसे दी गई निश्चित ज़िम्मेदारियों को समय से निभाना चाहिए।
- उसके लिए निर्धारित कार्यों को गुणवत्ता के साथ समय से पूर्ण करना चाहिए।
- उसे ऐसा कोई भी अपराध रूपी कृत्य नहीं करना चाहिए और न ही ऐसा अपराध रूपी कृत्य करने के लिए अन्य को उकसाना चाहिए,।
- किसी अन्य कर्मचारी के साथ किसी प्रकार का असभ्य व्यवहार नहीं करना चाहिए।
- किसी अन्य कर्मचारी के विरुद्ध मनघड़ंत आरोपों वाली कोई शिकायत भी दर्ज़ नहीं करनी चाहिए।
- अपने पर्यवेक्षक का यथासंभव सम्मान करना चाहिए।
- अपने पर्यवेक्षक का अपमान नहीं करने का प्रयास अवश्य करना चाहिए, आदि।

सरकार में जब नेत्रहीन एवं विकलांग व्यक्तियों के लिए भी काम की व्यवस्था की जाती है तब ऐसी स्थिति में किसी कर्मचारी की छंटनी करना संभवतः नैतिक निर्णय नहीं होगा, विवादित कर्मचारी को अन्य कोई काम दिया जा सकता है। इसके अलावा, सरकार तो सरकार है, और सरकार तो एक समुद्र की तरह है जहाँ हर प्रकार का कर्मचारी समा ही जाता है, फिर छंटनी करने का कैसा प्रश्न?

❑

रेनू नूर

प्रकाशन विभाग द्वारा सन्तोष खन्ना की उपभोक्ताओं के अधिकारों पर पुस्तक का लोकार्पण

('उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1988 और उपभोक्ताओं के अधिकार' इस शीर्षक से मेरी इस पुस्तक के प्रकाशन विभाग तीन संस्करण प्रकाशित कर चुका है। (2006 में प्रकाशित) इस पुस्तक का लोकार्पण प्रकाशन विभाग ने ही इस किया था।)

18 सितंबर, 2006 को राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग के सदस्य न्यायमूर्ति श्री के.एस. गुप्ता ने दिल्ली पुस्तक मेले में आयोजित एक समारोह में हिंदी की जानी-मानी लेखिका एवं जिला उपभोक्ता फोरम की पूर्व सदस्या श्रीमती सन्तोष खन्ना की पुस्तक 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम और उपभोक्ता अधिकार' पुस्तक का लोकार्पण किया। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित की गई इस पुस्तक में उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा तथा उपभोक्ता क़ानून से संबंधित महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गई है। कहना न होगा कि पुस्तक उपभोक्ता अधिकार अधिनियम, 1986 को आधार बना कर लिखी गई है। लेखिका सन्तोष खन्ना ने इस पुस्तक में उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों के बारे में सही, प्रामाणिक और नवीनतम जानकारी सरल और सहज भाषा में दी है। इस अवसर पर समारोह को संबोधित करते हुए श्री के.एस. गुप्ता ने लेखिका को क़ानून जैसे जटिल विषय पर सरल भाषा में पुस्तक लिखने के लिए बधाई दी।

समारोह की अध्यक्षता राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग के सदस्य न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर ने की। दिल्ली न्यायिक अकादमी के वर्तमान सदस्य श्री लोकेश्वर प्रसाद (दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश एवं दिल्ली राज्य उपभोक्ता फोरम के पूर्व अध्यक्ष) ने समारोह को संबोधित करते हुए पुस्तक को सामान्य जन के लिए अत्यंत उपयोगी बताया। प्रकाशन विभाग की निदेशक श्रीमती वीना जैन ने अतिथियों का स्वागत करते हुए पुस्तक के बारे में विस्तृत जानकारी दी। निदेशक महोदय ने कहा कि यह पुस्तक उपभोक्ताओं

के अधिकारों के बारे में है और हमारे उपभोक्ता इस देश के लाखों पाठकगण हैं। सरकारी क्षेत्र में देश का सबसे बड़ा प्रकाशन संस्थान होने के नाते पाठकों के प्रति हमारी कुछ ज़िम्मेदारी है, जवाबदेही है, उत्तरदायित्व है और श्रीमती संतोष खन्ना जैसी साहित्यकार तथा क़ानून की जानकार की इस विषय पर पुस्तक प्रकाशित कर हमने अपने उस उत्तरदायित्व को पूरा किया है।

प्रकाशन विभाग की गतिविधियों की जानकारी देते हुए श्रीमती वीना जैन ने बताया कि विभाग हर साल डेढ़ सौ से अधिक पुस्तकों का प्रकाशन करता है। इनमें ज़्यादातर किताबें हिंदी में होती हैं परंतु हम अंग्रेज़ी, उर्दू, पंजाबी, तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती, बांग्ला और अन्य भारतीय भाषाओं में भी पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हैं।

प्रतिष्ठित विदूषी श्रीमती सन्तोष खन्ना लोक सभा से सेवानिवृत होने के बाद राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के उत्तरी जिले के उपभोक्ता फोरम में न्यायाधीश रही हैं और उन्होंने उपभोक्ता संरक्षण क़ानून को न्याय के धरातल पर कार्यान्वित किया है और वही अनुभव इस पुस्तक की आधारशिला बना है। यह पुस्तक उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों के विषय में जाग्रत करने में एक विशेष भूमिका निभा रही है। मैं लेखिका को अपनी और आप सब की ओर से बधाई देती हूँ।

अपनी पुस्तक के लोकार्पण के अवसर पर लेखिका श्रीमती सन्तोष खन्ना ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा -- ''मंचासीन मनीषी माननीय न्यायमूर्ति श्री के.एस. गुप्ता जी, माननीय न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर जी, माननीय न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद जी एवं प्रकाशन विभाग की माननीया श्रीमती वीना जैन जी एवं प्रोफेसर डॉ. पूरनचंद टंडन जी...

मेरा यह सौभाग्य है कि इस अवसर पर देश के प्रतिष्ठित न्यायमूर्ति पुँज यहाँ विराजमान हैं। आप सभी न्यायमूर्ति उपभोक्ताओं के हितों के प्रति समर्पित होकर कार्यरत् हैं। आप महानुभावों के अनुभव एवं संवेदनशीलता को यह श्रेय जाता है कि आपके सद्‌प्रयासों से आज उपभोक्ता क्षेत्र में एक क्रांति-सी आ गई है। वैसे देश में अनेक क़ानून हैं किंतु जितना हित उपभोक्ताओं का इस उपभोक्ता संरक्षण क़ानून ने किया है उतना शायद किसी अन्य क़ानून से नहीं हुआ होगा। उपभोक्ता क्रांति और आंदोलन को और सफल एवं सार्थक बनाने के लिए आपका उल्लेखनीय योगदान रहा है। मुझे भी आप के सान्निध्य में उपभोक्ता संरक्षण क़ानून के लिए कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ और उन्हीं अनुभवों के आधार पर मैंने इस गंभीर विषय पर पुस्तक लिखी क्योंकि मुझे इस बात का अहसास हुआ कि यह ज़रूरी है कि उपभोक्ताओं में और चेतना आए इसके लिए हिंदी में पुस्तकों की आवश्यकता है इसमें दो राय नहीं है। मैं प्रकाशन विभाग की आभारी

हूँ कि उन्होंने इस हिंदी पुस्तक का प्रकाशन कर पुस्तक के रूप में मेरे प्रयास को जन-जन तक पहुँचाने का द्वार खोला है। मैं प्रकाशन विभाग के सभी अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों के प्रति भी आभारी हूँ कि उन्होंने इस विशाल समारोह का आयोजन किया है। उन्हीं के सद्प्रयासों का ही यह सुफल है कि आज हम सब यहाँ एकत्रित हुए हैं। सब का एक ही ध्येय है उपभोक्ता चेतना लाने का।

हमें लगता है कि शहर में शिक्षित वर्ग है, संपन्न उपभोक्ता वर्ग है इनको तो अपने अधिकारों की जानकारी तो होगी ही, परंतु कई बार यह सच नहीं होता। मुझे IGNOU के छात्रों को पढ़ाने का सुअवसर मिला है। IGNOU के उपभोक्ता अधिकार विषय पर प्रमाण-पत्र पाठ्यक्रम में छात्रों को प्रोजेक्ट बनाना होता है तो मैं उन्हें ऐसे विषय पर प्रोजेक्ट बनाने को कहती हूँ जिसमें उपभोक्ताओं से बातचीत करनी होती है। ऐसे सर्वेक्षण में मैंने देखा है कि शिक्षित वर्ग को भी उपभोक्ता अधिकारों की जानकारी नहीं होती, उन्हें अधिकारों के उल्लंघन की स्थिति में क्या करना चाहिए, यह भी पता नहीं होता है। इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि कम पढ़े-लिखे और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र के अथवा छोटे शहरों के उपभोक्ताओं की स्थिति क्या होगी। हिंदी में मेरी यह पुस्तक सौभाग्य से एक संपूर्ण दस्तावेज़ बन गया है कि इसे पढ़ कर उन सब बातों का पता चल सकता है जो एक उपभोक्ता को जानना ज़रूरी है।

मैं यहाँ प्रकाशन विभाग के लोगों को बताना चाहती हूँ कि मैंने भी अपना कैरियर सूचना और प्रसारण मंत्रालय के आकाशवाणी से आरंभ किया था। लोक सभा में तो बाद में गई। मेरा यह सौभाग्य रहा कि मुझे इस एक ही जीवन में सरकार, संसद और न्यायपालिका में सेवा करने का अवसर मिला है। यह पुस्तक भी उपभोक्ता फोरम में कार्य करने के कारण ही संभव हो पाई है। अंत में मैं सब के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ। विशेष रूप से सभागार में उपस्थित सभी महानुभावों का धन्यवाद करती हूँ जो दूर-दूर से यहाँ इस कार्यक्रम में भागीदारी करने के लिए पधारे हैं।''

कार्यक्रम का सफल संचालन दिल्ली विश्वविद्यालय में सीनियर रीडर व भारतीय अनुवाद परिषद् के निदेशक प्रोफेसर पूरनचंद टंडन ने किया।

❑

डॉ. उषा देव

कोयल

कोयल की कुहू-कुहू की सुमधुर ध्वनि
हर लेती है सब का ही मन
आश्चर्य! आम्र-बौर आते ही
कहो कैसे कहाँ से
तुम गीत सुनाने आ जाते हो?[1]
बोलो, कहाँ छिपे रहते हो बाकी दिन?
कोयल रानी अति व्यस्त-सी
खोज रही कौवों का घर
यह कैसी नियति है
तुम गाते, लुभाते फिरते हो
डाल-डाल उछल-उछल
और वह
चालाकी से रखती फिरती
इक-इक अंडे को घर घर[2]
चाहे पले वे कौवे के घर
पर स्वर तुम्हारा ही हैं पाते
आते ही अगले बसंत में
वे भी, कुहू-कुहू की रट लगाते
दुनिया कहती कौओं को चतुर-चालाक
तुम तो हो असली छुपे रुस्तम।

❑

1. नर कोयल ही गाता है। इस तथ्य का उद्‌घाटन कालिदास ने अपने नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' में किया है -- 'पुंस्कोकिलः कूजति'।
2. मादा कोयल अलग-अलग कौए के घौंसलों में एक-एक अंडा देती है।

अरविंद घोष

सागर और रात

धूसर रंग का सागर
रात के सुरमई अँधेरे में
नहीं देता साफ़ दिखाई
धीमी-धीमी आवाज़ करता
धीमे-धीमे आगे बढ़ता
अपने असंख्य हाथों से
थाम लेता शांत इन दीवारों को।
मैं देख रहा हूँ दूर-बहुत-दूर
टिमटिमाते क्षितिज के पार
वह स्पर्श का अहसास
सुनहरी लहरों की सीत्कार
बढ़ रही जो किनारों की ओर
परस्पर धकियाती फुसफुसाते
करती वार्तालाप।
लहरों की अंतहीन पंक्तियाँ
आंदोलित लरजती चकत्तेदार झाग।
पल-पल परिवर्तित होते
परिवेश का निस्तब्ध कोलाहल।

अनु. सन्तोष खन्ना

❑

डॉ. डी.के. सिंह

भारत में विधिक सहायता : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जब भारत का संविधान लागू हुआ तो इसके अंतर्गत तमाम ऐसे प्रावधान रखे गए जो कमज़ोर वर्ग या शोषित वर्ग की भलाई के लिए थे। भारत वर्ष की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विषमताएँ कुछ वर्गों या लोगों के प्रति अन्यायकारी थीं, जिन्हें स्वतंत्रता के पश्चात् दूर करने का प्रयास विधायी, कार्यपालकीय एवं न्यायिक स्तर पर हुआ है। भारतीय संविधान को सामाजिक दस्तावेज़ कहा जाता हैं जिसमें अधिकतर प्रावधान कल्याणकारी राज्य की अभिवृद्धि हेतु अग्रसर हैं। विधि जगत् में एक प्रमुख वाक्य है कि ''न्याय में देर करना अन्याय है।'' भारतीय संविधान के अंतर्गत विधि के शासन की अवधारणा निहित है जिसके अनुसार विधि के समक्ष सब बराबर हैं एवं विधियों का संरक्षण बिना किसी भेदभाव के सबको प्राप्त है। परंतु बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जो अपने कतिपय सामाजिक या आर्थिक कारणों से अपने ऊपर होने वाले अन्याय या शोषण का मुक़ाबला नहीं कर पाते हैं।

विधायी स्तर पर सन् 1987 में संसद ने इस दिशा में ऐतिहासिक विधिक सहायता प्राधिकरण अधिनियम, 1987 को पारित किया है जो कि ऐसे व्यक्तियों को जो आर्थिक कारण से या विषम सामाजिक परिस्थितियों के कारण न्याय से वंचित हो सकते हैं, को न्याय दिलाने हेतु सराहनीय कार्य किया है। इस अधिनियम के अंतर्गत लोक अदालत इत्यादि के द्वारा त्वरित न्याय प्रदान करने की भी व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त, सिविल प्रक्रिया एवं अपराधिक प्रक्रिया संहिता में भी कुछ ऐसे प्रावधान हैं जो विधिक सहायता से संबंधित हैं।

विधिक सहायता एवं निःशुल्क विधिक सहायता का अर्थ :–

भारत में भौगोलिक, आर्थिक व सामाजिक विभिन्नताओं को देखते हुए विधिक सहायता प्रदान करना अत्यावश्यक हो जाता है जिससे लोकतंत्र की नींव और मज़बूत होती है। भारत में बहुत से लोग आर्थिक एवं शैक्षणिक कारणों से या तो अपने अधिकारों के

बारे में अनभिज्ञ हैं या मज़बूरी में अधिकारों को लागू करवाने में सफल नहीं हो पाते इसलिए विधिक सहायता प्रदान करना न्याय एवं लोकतंत्र के हित में आवश्यक हो जाता हैं।

'विधिक सहायता' पदावली का अर्थ ऐसे सभी व्यक्तियों को उनके अधिकारों के संरक्षण एवं प्रर्वतन हेतु उपयुक्त साधन एवं सामग्री उपलब्ध करवाना है ताकि उनके साथ न्याय हो सके। सामान्यतया विधिक सहायता के अंतर्गत आर्थिक रूप से कमज़ोर लोगों को, जो अपना मुकदमा लड़ने में सक्षम नहीं हैं, क़ानूनी एवं आर्थिक सहायता देना होता है ताकि ऐसे लोग अपने अधिकारों का रक्षण कर सकें। अतः विधिक सहायता से तात्पर्य ग़रीब एवं असहाय व्यक्तियों को निःशुल्क क़ानूनी एवं आर्थिक सहायता दिलाया जाना होता है ताकि वे प्रभावी रूप से अपने वाद को ला सके या अपना बचाव कर सके।

निःशुल्क विधिक सहायता का अभिप्रायः सभी विधिक मामलों में ऐसे व्यक्तियों को निःशुल्क क़ानूनी सहायता प्रदान करना है ताकि वे ऐसे विधिक कार्यवाहियों में अपने अधिकारों का सरंक्षण कर सके एवं न्याय प्राप्त कर सके। निःशुल्क विधिक सहायता के अंतर्गत राज्य के ख़र्चे पर वकील का नियुक्त किया जाना एवं दस्तावेज़ आदि तैयार करना शामिल हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39 ए इस बारे में राज्य के ऊपर दायित्व का अधिरोपण करता है कि वह सभी व्यक्तियों को चाहे वह वादी के रूप में हो या अभियुक्त हो, को निःशुल्क विधिक सहायता प्रदान करें।

विधिक सहायता का अर्थ न केवल न्यायालय में मामलों के प्रतिनिधित्व से है बल्कि इसमें उनके संधारण (समझौता) उनके अधिकारों एवं दायित्वों के बारे में जानकारी देना तथा निर्धन एवं ग़रीब व्यक्तियों को विधिक एवं संविधानिक संरक्षण सुनिश्चित करना भी हैं।[1]

न्यायाधीश पी.एन. भगवती के अनुसार, ''सभी के लिए समान न्याय एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है, लेकिन धन का अभाव ग़रीब या निर्धन व्यक्तियों के अधिकारों के सरंक्षण के मार्ग में एक अवरोध है। विधिक सहायता निर्धन व्यक्तियों को विधि के समान संरक्षण प्रदान करने हेतु एक साधन है।''

इसके व्यापक अर्थ में विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा विधिक सहायता एवं सलाह के अनुसार, विधिक सहायता के अंतर्गत केवल मुकदमा में आर्थिक सहायता देना ही सम्मिलित नहीं है, बल्कि इसमें विधिक सलाह, मध्यस्थता एवं संधारण, जनता में विधिक चेतना जागृत करना, विधिक एवं राष्ट्रीय विकास में समुदाय की वास्तविक सहभागिता तथा स्वयं विधिक प्रक्रिया में सुधार करना भी शामिल है।

विधिक सहायता का उद्देश्य

विधिक सहायता एक व्यापक अर्थ वाली शब्दावली है। सामान्य तौर पर इसका उद्देश्य न्याय को सभी लोगों तक पहुँचाना है तथा सभी वर्ग के व्यक्ति अपने सामान्य अधिकारों

एवं कर्त्तव्यों से परिचित हो सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है। कि न्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करना, जो अन्याय व शोषण से मुक्त हो, विधिक सहायता का उद्देश्य समान न्याय सुनिश्चित करना है। विधिक सहायता यह सुनिश्चित करने के लिए प्रदान की जाती है कि न्याय सुनिश्चित करने के अवसर से किसी व्यक्ति को इसकी निर्धनता, अशिक्षा आदि के कारण से वंचित न किया जा सके। विधिक सहायता के उद्देश्य निम्नानुसार हैं :--

1. विधिक सहायता, समतावादी समाज के निर्माण में सहायक होती है।
2. इसके माध्यम से अधिवक़्ता, न्यायाधीशगण एवं विधि को प्रवर्तन में लाने वाली अधिकरणों के ग़रीब एवं शोषित किए गए व्यक्ति के प्रति व्यवहार में परिवर्तन आता है तथा इन लोगों द्वारा निःशुल्क विधिक सहायता दी जाती हैं।
3. इसके माध्यम से समाज के अनेक वर्ग ग़रीब व्यक्तियों की समस्या के निवारण हेतु चिंतन करने के लिए मज़बूर होते है। इसके साथ ही सरकारी तंत्र भी समस्या के निस्तारण हेतु उपाय विकसित करने के लिए विवश हो जाता है।
4. इसके माध्यम से विधिक न्यायिक प्रक्रिया एवं व्यवस्था, कमज़ोर वर्ग के लिए परेशान करने वाली साबित न हो वरन् विधिक सहायता द्वारा ग़रीब वर्ग की समस्याओं का विश्लेषण किया जाता है। तथा ऐसी व्यवस्था स्थापित की जाती है जिसके तहत उन्हें सहज, सुगम एवं सहता न्याय प्राप्त हो सके।
5. विधिक सहायता शिविर प्रोग्राम आदि के द्वारा अधिवक़्ता, न्यायाधीश, विधि के छात्र, विधि के प्राध्यापक एवं समाज के संवेदनशील व्यक्तियों के मन में ग़रीब एवं कमज़ोर व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति एवं सहायता प्रदान करने का भाव जागृत होता है।
6. इसके माध्यम से जनता में अपने अधिकारों व दायित्वों के प्रति चेतना जागृत होती है।

अतः विधिक सहायता का उद्देश्य समता पर आधारित न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करना है जिसमें सभी प्रकार के व्यक्ति अन्याय एवं शोषण से मुक्त रहे या कम से कम पीड़ित हो।

विधिक सहायता संबंधी संवैधानिक उपबंध

भारतीय संविधान, जो कि भारत में रहने वाले सभी व्यक्तियों के उत्थान एवं विकास का मूल ग्रंथ है, में विधिक सहायता संबंधी कई महत्त्वपूर्ण प्रावधान किए गए है। विधिक सहायता को संविधान में व्यापक महत्त्व दिया गया है और इसकी प्रबलता को 42 वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 39 ए जोड़कर और बढाया गया है। वैसे देखा जाए तो भारतीय संविधान के बहुत से प्रावधान विधिक सहायता से संबंधित हैं जो कि सामाजिक समानता को अग्रसर करते हैं। इसलिए ग्लेडविन आस्टिन ने भारतीय संविधान को एक सामाजिक

दस्तावेज़ की संज्ञा दी हैं। मुख्य रूप से संविधान के निम्नलिखित प्रावधान या अनुच्छेद प्रमुख तौर पर विधिक सहायता से संबधित है : 1. प्रस्तावना, 2. अनुच्छेद 14, 3. अनुच्छेद 21, 4. अनुच्छेद 39ए; एवं 5. अनुच्छेद 32 एवं 226

संविधान की प्रस्तावना में संक्षिप्त रूप में उन उद्देश्यों को बताया गया हैं कि जिनकी प्राप्ति संविधान का लक्ष्य है। संविधान निर्माता कैसा भारत बनाना चाहते थे, इसकी पुष्टि संविधान की प्रस्तावना से होती है। संविधान की प्रस्तावना में देश के सभी नागरिकों को आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक न्याय देने का संकल्प लिया गया।

अनुच्छेद 14 समता के सामान्य नियम को अधिकथित करता है जो भारत के सभी नागरिकों एवं व्यक्तियों को बराबरी का अधिकार एवं अवसर देता है तथा उन्हें विभेद से बचाता है। इस अनुच्छेद के अनुसार, ''भारत राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति की विधि के समक्ष समता से अथवा विधियों के समान संरक्षण से राज्य द्वारा वंचित नहीं किया जाएगा।''

अनुच्छेद 14 में डायसी द्वारा प्रतिपादित विधि शासन की अवधारणा निहित है। जिसका तात्पर्य है कि विधि के समक्ष सभी समान है भले ही उनकी प्रस्थिति कुछ भी क्यों न हो। अनुच्छेद 14 में समता के नियम का यह तात्पर्य नहीं है कि प्रत्येक दशा या परिस्थिति में यह नियम लागू किया जा सकता है। अनुच्छेद 14 वर्गीकरण की अनुमति देता है परंतु यह वर्गीकरण युक्तियुक्त होना चाहिए। अपने एक ऐतिहासिक महत्त्व के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने अवधारित किया है कि अनुच्छेद 14 के अंतर्गत नैसर्गिक न्याय सिद्वान्त शामिल हैं।[2]

अनुच्छेद 21 की उच्चतम न्यायालय ने व्यापक व्याख्या करते हुए **एम.एम. हासकाट बनाम महाराष्ट्र राज्य**[3] में कहा कि सिद्धदोष व्यक्ति को उच्च न्यायालय में 'अपील फाइल' करने का मूल अधिकार हैं तथा उसे निर्णय की प्रतिलिपि निःशुल्क पाने तथा ''निःशुल्क क़ानूनी सहायता'' पाने का भी अधिकार प्राप्त हैं। इन शर्तों के उल्लंघन से अनुच्छेद 21 में प्रदत्त स्वतंत्रता का उल्लंघन होता है। अनुच्छेद 21 के अनुसार किसी व्यक्ति को उसके प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं।'' **सुपरिंटेंडेंट ऑफ लीगल रिमेम्ब्रांसर ऑफ लीगल अफेयर्स बनाम एम. भौमिक**[4] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि निःशुल्क विधिक सहायता पाने का अधिकार अनुच्छेद 21 के अधीन युक्तियुक्त ऋजु प्रक्रिया का एक आवश्यक तत्त्व है जिसके अभाव में प्रक्रिया अयुक्तियुक्त हो जाएगी। पुनः **सुखदास बनाम संघ राज्य क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश**[5] के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि निःशुल्क विधिक सहायता प्रदान करने में विफलता, जब तक कि अभियुक्त ने इनकार न कर दिया हो, परीक्षण को अवैध बना देती है, अभियुक्त को इसके लिए अर्जी देने की आवश्यकता नहीं है। निःशुल्क विधिक सहायता अभियुक्त का एक मूल अधिकार है और अनुच्छेद 21 के अधीन युक्तियुक्त,

ऋजु और उचित प्रक्रिया का एक तत्त्व है। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह उसे सूचित करे कि उसे निःशुल्क विधिक सहायता पाने का अधिकार है।

हुस्न आरा खातून बनाम बिहार राज्य[6] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि 'शीघ्रतर परीक्षण और निःशुल्क विधिक सहायता' के अधिकार अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त दैहिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार का एक आवश्यक तत्त्व हैं। **महाराष्ट्र राज्य बनाम मनुभाई प्राग जीवासी**[7] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने प्राईवेट लॉ कालेजों को भी अनुदान के लिए महाराष्ट्र सरकार को निर्देश दिए। न्यायालय ने कहा कि निःशुल्क सहायता प्रदान करने के लिए प्रशिक्षित अधिवक्ताओं की आवश्यकता होती है और यह तभी सम्भव है जब विधि शिक्षा के लिए अच्छे कॉलेज हों जिसमें अच्छे अध्यापक और पुस्तकालय भी हों। उच्चतम न्यायालय ने अपने महत्त्वपूर्ण निर्णय **सुखदास बनाम अरुणाचल प्रदेश**[8]में कहा कि अनुच्छेद 39 ए को अनुच्छेद 21 के साथ पढ़ा जाना चाहिए। विधिक सहायता पाना निर्धन व्यक्ति या अभियुक्त का मूल अधिकार हैं। न्यायालय ने आगे कहा कि यह लोकतंत्र का मज़ाक होगा जब ऐसे व्यकित स्वयं निःशुल्क विधिक सहायता के लिए आवेदन करें या कहें। यह न्यायालय के पीठासीन अधिकारी का कर्त्तव्य है कि वे स्वयं ऐसे व्यक्तियों को बताये कि निःशुल्क विधिक सहायता पाना उनका अधिकार है।

'निःशुल्क विधिक सहायता' की संकल्पना 'विधिक सहायता' से अधिक विस्तृत हैं, जो निर्धन अभियुक्त को जिसे गिरफ़्तार किया गया है, प्राप्त है।[9]

अनुच्छेद 32 विधिक सहायता प्रदान करने हेतु एक सशक्त उपबंध है जिसमें व्यक्तियों के मूल अधिकारों के प्रवर्तन की गारंटी दी गई हैं। यह संविधान के भाग-तीन में दिए गए मूल अधिकार का उल्लंघन किसी भी व्यक्ति के द्वारा दिया जा सकता है तो पीड़ित व्यक्ति सीधे उच्चतम न्यायालय में जा सकता है और उच्चतम न्यायालय उसे उपचार प्रदान करने हेतु कोई भी आदेश, निदेश या रिट जारी कर सकता है। उच्चतम न्यायालय ने अपने कई महत्त्वपूर्ण निणयों[10] द्वारा 'सुने जाने का अधिकार' को विस्तृत कर दिया है, और 'लोकहित वाद' नामक एक नई अवधारणा प्रतिपादित की है जिसके अनुसार अब कोई संस्था या नागरिक जो कि लोकहित की भावना से प्रेरित हो, किसी ऐसे व्यक्ति के संवैधानिक अधिकार या विधिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए रिट फाइल कर सकता है जो निर्धनता अथवा किसी अन्य कारण से अपने अधिकारों के उल्लंघन के बावजूद न्यायालय में वाद लाने में समर्थ नहीं है।

पीपुल्स यूनियन फार डेमोक्रेटिक राइटस के ऐतिहासिक मामले में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री भगवती ने लोकहितवाद के क्षेत्र एवं महत्त्व के बारे में कहा --

''किसी राज्य को अपने नागरिकों से यह कहने का अधिकार नहीं है कि चूँकि हमारे न्यायालय में धनी व्यक्तियों के अनेक मामले लंबित हैं, अतः हम निर्धनों को न्याय पाने

के लिए तब तक नहीं आने देंगे जब तक कि उनके मुकदमों का, जो धनी वकीलों की सहायता प्राप्त कर सकते हैं, निपटारा न कर दिया जाए। न्यायालय में वादों में वृद्धि इस बात का कोई उत्तर नहीं है कि समाज के निर्बल और कमज़ोर वर्गों के लोगों के लिए न्याय पाने का रास्ता ही बन्द कर दिया जाएं''

अनुच्छेद 39 में विधिक सहायता के संबध में एक स्पष्ट प्रावधान है जो संविधान में 42वें सविंधान संशोधन अधिनियम 1976 के द्वारा जोड़ा गया हैं जो निःशुल्क क़ानूनी सहायता के बारे में हैं। इसके अनुसार, राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि विधिक सहायता इस प्रकार काम करे कि सभी को अवसर के आधार सुलभ हों विशिष्टतया आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए तथा उपयुक्त विधान द्वारा किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करें। यह उल्लेखनीय है कि अनुच्छेद 39, संविधान के भाग-IV में नीति निदेशक तत्त्वों में है। उच्चतम न्यायालय ने अपने कई महत्त्वपूर्ण निर्णयों[11] में इसे अब अनुच्छेद 21 के अंतर्गत मूल अधिकार के रूप में मान्य कर दिया है।

उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 39 के विस्तार क्षेत्र के बारे में अवलोकन करते हुए **रंजन त्रिवेदी बनाम भारत संघ एआईआर 1983 एससी 224** के मामले में कहा कि इस प्रावधान के तहत परमादेश की रिट जारी नहीं हो सकती। यह प्रावधान स्पष्ट करता है कि समान न्याय एवं निःशुल्क विधिक सहायता का क्रियान्वयन उपर्युक्त विधायन या निःशुल्क विधिक सहायता की योजनाओं को बनाकर किया जा सकता हैं। एक अन्य वाद[12] में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 39 के अंतर्गत राज्य का यह दायित्व है कि वह ऐसी पूर्ण एवं कारगर विधिक सहायता प्रोग्राम को बनाए जो समानता के आधार पर न्याय को बढ़ावा देने को सुनिश्चित करे।

विधिक सहायता संबंधी अन्य संविधिक अधिनियम :–

संविधान में विधिक संबंधी दिए गए प्रावधानों के अतिरिक्त अन्य संविधियों में भी विधिक सहायता या विधिक सेवा संबधी प्रावधान दिए गए हैं। इस संबंध में सन् 1987 में संसद द्वारा पारित ''विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 प्रमुख है। यह अधिनियम पूर्णतः विधिक सहायता से सबंधित है। संवैधानिक प्रावधान एवं उच्चतम न्यायालय द्वारा विधिक सहायता के बारे में दिए गए प्रमुख निर्णयों के प्रकाश में संसद ने इसे पारित किया हैं। इसके अतिरिक्त सिविल प्रक्रिया संहिता एवं आपराधिक प्रक्रिया संहिता में भी कुछ उपलब्ध विधिक सहायता से संबंधित है। इसके अतिरिक्त, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 एवं अपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 में भी विधिक सहायता संबंधी प्रावधान दिए गए हैं।

❑

संदर्भ

1. डॉ. हरिमोहन मित्तल, लोकहित मुकदमा, विधिक सहायता एवं विधिक सेवाएँ, संस्करण 2000, भाग द्वितीय, पृष्ठ 3
2. सेंट्रल इनलैड वाटर ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन बनाम ब्रजोनाथ गांगुली
3. ए.आई.आर. 1978, एस.सी. 1548
4. ए.आई.आर. 1981, एस.सी. 917
5. (1986) 2, एस.सी.सी 401
6. ए.आई.आर. 1979, एस.सी. 1360
7. (1995) 5, एस.सी.सी 730
8. ए.आई.आर. 1986, एस.सी. 991
9. एम.पी.जैन, कांस्टिट्यूसन ऑफ इंडिया, ईस्टर्न बुक कंपनी, 2013, पृष्ठ 1426
10. पीपुल्स यूनियन फार डेमोक्रेटिकराइटस बनाम भारत संघ, एफ.आई.आर., 1980, एस. सी. 1579, एस.पी. गुप्ता और अन्य बनाम भारत संघ ए.आई.आर., 1982, एस. सी. 149
11. एम.एच. हासकट बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए.आई.आर. 1978, एस.सी. 1548, हुस्न आरा खातून, बनाम बिहार राज्य, ए.आई.आर. 1979, एस.सी. 1360
12. बाबूभाई बनाम गुज़रात राज्य, ए.आई.आर 2007, एस.सी. 420
13. धारा 13(2), विधिक सेवाएँ प्राधिकरण अधिनियम, 1987
14. धारा 9(2) (a) एवं (इ), 1987

डॉ. अनिल कुमार यादव एवं अरूण कुमार

राजस्थान के जैसलमेर तथा पोखरण के मरुस्थल में खेती-बाड़ी के विकास में कृषि विज्ञान केंद्र की भूमिका

राजस्थान देश का सबसे बड़ा राज्य है। इसका क्षेत्रफल क़रीब 3,42,239 वर्ग किलोमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार, इसकी जनसंख्या 6 करोड़ 83 लाख 48 हज़ार 437 है। यहाँ की साक्षरता दर क़रीब 66.11 प्रतिशत है। पुरुषों में यह दर 79.19 प्रतिशत है तथा स्त्रियों में 52.12 प्रतिशत है। यह दर ग्रामीण क्षेत्र में कम तथा शहरी क्षेत्रों में अधिक है। ग्रामीण क्षेत्र में यह दर 61.44 प्रतिशत है तथा शहरी क्षेत्र में 79.88 प्रतिशत है। पुरुषों में 76.16 प्रतिशत (ग्रामीण) तथा 87 प्रतिशत शहरों में हैं। शहरों में पुरुषों की दर 87.91 प्रतिशत है तथा स्त्रियों में 70.73 प्रतिशत है।

इस प्रपत्र में हमने राजस्थान के जिला जैसलमेर व पोकरण में किसानों की स्थिति एवं उनका के.वी.के. तथा राज्य सरकार के साथ संपर्कों के बारे में विस्तार से चर्चा की है। इसके अलावा, किसानों की वास्तविक स्थिति का ब्यौरा लेने के लिए उनके खेतों पर जाकर सत्यापन व करने के साथ-साथ कृषि विभाग केंद्रों के संसाधनों का भी अवलोकन किया गया है।

कृषि विज्ञान केंद्र (जैसलमेर एवं पोखरण)

कृषि विज्ञान केंद्र जैसलमेर एवं पोखरण को देखने में वहाँ हमें कृषि विज्ञान केंद्र एवं कृषि से संबंधित समीक्षा करने का मौका मिला। इस दौरे का एक निश्चित उद्देश्य रहा जिसमें दो कृषि विज्ञान केंद्रों के कृषि वैज्ञानिकों के काम, योगदान और चल रहे महत्त्वपूर्ण योजनाओं आदि की एक विस्तृत समीक्षा एवं सत्यापन इत्यादि करना था।

जैसलमेर का विवरण : हमने कोर्डिनेटर को पहले ही सूचना दे रखी थी कि हमें किसानों के साथ एक सभा करनी है। इसलिए उन्होंने पहले से ही कृषकों को सूचना

देकर सभा का बंदोबस्त करा रखा था। हमें काफ़ी तादाद में जैसलमेर के कृषक एवं राज्य कृषि विभाग संबंधित स्टाफ मौजूद मिला। इस बैठक के अंतर्गत हमें उन दोनों कृषि विज्ञान केंद्रों के प्रगतिशील कृषकों से मिलने एवं उनके साथ समस्याओं पर विचार-विमर्श करने का एक महत्त्वपूर्ण अवसर प्राप्त हुआ जो कई कारणों से आवश्यक एवं कृषि से संबंधित जानकारी का स्रोत रहा। वैसे तो हम यह भी कह सकते हैं कि इस यात्रा से एवं कृषि दर्शन से एक नया ज्ञान प्राप्त हुआ क्योंकि वहाँ के कृषकों की समस्याओं को सुना एवं उनका समाधान मौके पर ही किया गया।

इस सभा के उपरान्त अगले दिन हमारी टीम एवं कृषि विज्ञान के कुछ अधिकारी गण रामगढ़ के कृषकों के कृषि भ्रमण पर निकल पड़े जहाँ पर कृषि तकनीक का जायज़ा लिया तथा इसके साथ-साथ यह भी देखने में आया कि रामगढ़ का जो कृषि क्षेत्र है वह पाकिस्तान बॉर्डर से सटा है जहाँ आए दिन घुसपैठ होती रहती है। वहाँ पर हमेशा गोली बारी की आवाज़ें गूँजती रहती हैं। कभी-कभी तो बारूद उनके खेतों तक भी आ जाते हैं। जिससे वहाँ के किसान भयभीत भी रहते हैं। वैसे तो उस पूरे क्षेत्र पर भारतीय सेना का कब्ज़ा है। फिर भी भय का माहौल बना रहता है।

रामगढ़ जाते समय जैसलमेर के.वी.के. के कृषि वैज्ञानिक तथा एक-दो स्टॉफ हमारे साथ थे। रास्ते में हमें वहाँ एक नहर दिखाई दी जिससे वहाँ की कृषि भूमि की सिंचाई होती है एवं रहने वाले लोगों के लिए पीने का पानी मिलता है। हमें के.वी.के. कृषि वैज्ञानिकों ने वहाँ कुछ प्रगतिशील कृषकों से मिलवाया जो कि के.वी.के. के संपर्क में रहते हैं। ये कृषक वैज्ञानिक तौर तरीक़ों से खेती कर अपनी पहचान एवं प्रगतिशीलता को उच्च शिखर तक ले जा रहे थे। हमने उन कृषकों से उन्हें मिल रही तकनीकी सुविधा, सलाह, मदद आदि के बारे में जानकारी ली फिर कृषकों को वैज्ञानिक ढंग से खेती करने में आई बाधाओं को जानने का प्रयास किया। इसके अलावा, उन बाधाओं को कृषि वैज्ञानिक तथा कोर्डिनेटर द्वारा समाधान करने का एक प्रयास किया। जिन कृषकों से हम मिले उसमें सर्वप्रथम श्री मनसा सिंह थे। उनका ग्राम रामगढ़ जैसलमेर था जो कि वैज्ञानिक खेती करने का एक उदाहरण है। इनके पास 75 बीघा ज़मीन है जिसमें चना, सरसों, जीरा, इसबगोल की फसल उगाते हैं। वे नहर एवं अपने ट्यूबवैल से सिंचाई करते हैं और इनको अच्छी आय होती है।

दूसरा कृषक मोहम्मद गफ्फार खान चक नं.18 एम.डी. तहसील अनूप शहर, जैसलमेर सेना से सेवा निवृत सिपाही हैं जोकि हिमाचल प्रदेश का मूल निवासी है। 2013 में 100 बीघा ज़मीन ख़रीद कर वैज्ञानिक तौर पर कृषि करते हैं। ये भी गेंहूँ, जीरा, तिलहन, इसबगोल, मूँगफली इत्यादि की खेती करते हैं। यह इलाके का एक जागरूक किसान है

तथा कृषि विज्ञान केंद्र से काफ़ी जानकारी हासिल करता है तथा कृषि की नई-नई प्रजाति भीी पैदावार करते हैं।

तीसरा कृषक श्री अमृत राम, गाँव बासन पीर दक्षिण जैसलमेर जो कि 150 बीघा ज़मीन का मालिक है वह उस क्षेत्र का एक धनाढ्य एवं जागरूक कृषक हैं। उसके पास खेती करने के बहुत सारे नए-नए औज़ार, मशीने, ट्रैक्टर एवं खुली जीप है जिससे फसल को बाज़ार तक ले जाते हैं तथा खेती के कार्य में भी उपयोग करते हैं। वे कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिकों के साथ अधिक संपर्क में रहते हैं। ये तिलहन जीरा इसबगोल एवं मोठ की खेती करते हैं। इनको खेती से काफ़ी अच्छी आय होती है।

चौथा कृषक श्री बूटा सिंह गाँव बासनपीर दक्षिणी जैसलमेर से है। ये 85 बीघा ज़मीन के काश्तकार है। अपने परिवार के साथ मिलकर बहुत ही मेहनत से काश्तकारी करते हैं ये गेहूँ, जीरा, मोठ, तिलहन की खेती करते हैं।

सेंटर ऑफ एक्सलेस फॉर डेटस्स पाल्म : जैसलमेर से क़रीब एक घंटे चलने के बाद रास्ते में एक सेंटर ऑफ एक्सेलेंस फोर डेट पाल्म पड़ता है उसका भ्रमण करने के लिए रुके। वहाँ के कोर्डिनेटर श्री दुर्गा लाल मौर्य थे उन्होंने खजूर के बाग का भ्रमण कराया। यह बाग क़रीब 625 बीघे में विस्तारित था और क़रीब 16,500 खजूर के पेड़ लगे थे। यह संपूर्ण बाग आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से लगाया गया है। इस बाग की एक विशेष ख़ासियत यह है कि आप जिस जगह पर खड़े होकर देखेंगे उधर से पेड़ों को एक पंक्ति में पाएँगे। इस खजूर के बाग से बहुत बड़ी तादाद में खजूर उत्पादन होता है जिससे क़रीब 16 लाख रुपए की सालाना आय राज्य सरकार को होती है। एक पेड़ से क़रीब 80 से 100 कि.ग्रा. खजूर उत्पादन होता है तथा वहाँ अनेक प्रजाति के खजूर उपलब्ध हैं। अधिक उत्पादकता होने से उनको रख रखाव के लिए भी आधुनिक रेफ्रिजरेशन, आधुनिक मशीनें, ट्रेक्टर इत्यादि उपलब्ध है। वहाँ का खजूर बाहर विदेशों में भी एक्सपोर्ट होता है।

लाठी गाँव : इस सेंटर आफ एक्सेलेंस फोर डेट पाल्म के भ्रमण के उपरांत हम लोग पोखरण के लिए रवाना हो गए तथा रास्ते में एक लाठी गाँव पड़ा जो कि पोखरण के. वी.के. क्षेत्र में आता है। उस लाठी गाँव के एक कृषक श्री जेठू सिंह चौहान से मिले जो कि जैसलमेर के.वी.के. की मीटिंग में भी मौजूद रहे थे। श्री जेठू सिंह उस क्षेत्र के बहुत प्रतिष्ठित धनाढ्य एवं जागरूक कृषक हैं और ये 425 बीघा ज़मीन के मालिक हैं। उनके पास खेती करने के नए-नए यंत्र, ट्रैक्टर, थ्रेसर, मशीनें इत्यादि उपलब्ध हैं। ये के. वी.के. के साथ लगातार संपर्क में रहते हैं। वहाँ कोई भी प्रोग्राम सभा या कन्फ्रेंस हो सभी में हिस्सा लेते हैं।और हर तरह की जानकारी प्राप्त करते हैं जैसा कि नए बीज प्रजाति,

खाद तथा उनको प्रयोग करने के तरीक़े आदि। ये आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से खेती करते हैं। इसके साथ-साथ ये मुर्गी पालन, पशु पालन, बकरी पालन इत्यादि भी करते हैं। हमारी टीम ने इनके कृषि फार्म का भ्रमण भी किया। ये ज्वार-बाजरा, गवार, अरंडी, तिलहन इसबगोल, जीरा, सरसों आदि की खेती करते हैं। इनके पास अपनी 4 ट्यूबवैल है। जिससे फसलों की सही समय पर सिंचाई होती है। और बिजली की कोई समस्या नही और इन्होंने स्वयं ही कहा है मुर्गी पालन से जो मुझे आय हुई थी उससे मैंने ट्रेक्टर ख़रीदा है। इनको खेती से बहुत ही अधिक आय होती है। जिससे इनका परिवार बहुत ही ख़ुशहाल है।

पोखरण का विवरण : वहाँ पर हमने फोकस ग्रुप डिस्कसन (केंद्रित समूह विमर्श) द्वारा किसानों की समस्याओं का पता लगाया। वहाँ हमें के.वी.के. के पदाधिकारी तथा राज्य कृषि क्षेत्र से जुड़े अन्य पदाधिकारी मिले एवं ज़िले भर से आए कुछ प्रगतिशील किसान जो के.वी.के. के वैज्ञानिकों से तकनीकी सलाह लेकर वैज्ञानिक पद्धति से खेती करके अपनी नई पहचान एवं समृद्धि को बढ़ा रहे थे। पोखरण के.वी.के. किराए की बिल्डिंग में चल रहा है। हमने इन प्रगतिशील एवं होनहार कृषकों, उनको जो वर्तमान में मिल रही सुविधा व तकनीकी सलाह-मदद इत्यादि का ब्यौरा लिया। किसानों के अपने खेती करने की वैज्ञानिक पद्धति में आ रही समस्याओं को जानने की कोशिश की तथा साथ-साथ उन तमाम समस्याओं का राज्य सरकार के अधिकारियों की मदद से निदान करने का प्रयास किया। कुछ किसानों के खेतों पर भ्रमण किया था जो इस प्रकार है :--

श्री नेमी चंद माली, गाँव पोखरण राजस्थान 10 बीघे के छोटे से किसान हैं। ये अपने भाई के साथ मिलकर खेती करते हैं। ये प्याज, मूली, गोभी, बैगन, मिर्च सब्ज़ियाँ उगाते हैं। अच्छे-अच्छे बीज प्रजातियों का ज्ञान रखते हैं तथा समय-समय पर कौन-सी कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग करना चाहिए इत्यादि सभी जानकारी इनको रहती है। दूसरे श्री दिनेश कुमार, गाँव पोखरण, राजस्थान भी एक प्रगति शील कृषक हैं ये भी सब्ज़ी उगाने की खेती करते हैं जोकि टमाटर, मटर, गोभी, प्याज, पालक, मिर्च इत्यादि की पैदावार लेते हैं। इसके साथ-साथ में मूँगफली भी उगाते हैं। के.वी.के. के संपर्क में रहने से बहुत अधिक जानकारी रखते हैं और समय-समय पर कीटनाशक दवाईयों का प्रयोग करते रहते हैं।

तीसरे श्री भेगा राम, गाँव व डाकखाना-पोखरण, ये भी सब्ज़ियों की पैदावार लेते हैं। इसके अलावा जीरा एवं इसबगोल की पैदावार भी लेते हैं। बाज़ार में सब्जियों के दाम काफ़ी अच्छे मिल जाते हैं। गाँव में इनके रहन सहन के ढंग से प्रतीत होता है कि इनकी अच्छी आय है।

निष्कर्ष

इस प्रपत्र में हमने राजस्थान के दो मरुस्थली जिलों की स्थिति-परिस्थिति एवं उसमें

खेती-बाड़ी के तौर-तरीक़ों पर प्रकाश डाला। हमने यह पाया कि के.वी.के. ने बड़ी कुशलता से अपने क्षेत्र के किसानों को जोड़ा हुआ है। उनको उनसे संबंधित सभी सूचनाएँ, तकनीक एवं उपकरण उपलब्ध कराते हैं व पहुँचाते हैं। के.वी.के. के वैज्ञानिक राज्य सरकार के अधिकारियों के साथ मिलकर फसलों के स्वास्थ्य का ध्यान रखते हैं। किसानों को हर सम्भव सहायता पहुँचाते है। और प्राकृतिक विपदा से भी बचाते है। किसानों का भी यह माानना है कि के.वी.के.उनकी भरपूर मदद करते हैं। यही वजह है कि मरुस्थल होते हुए भी यहॉ पर किसानों ने एक प्रसंशनीय कार्य किया है।

नीति निर्देश : इस भ्रमण के दौरान हमने किसानों, वैज्ञानिकों, राज्य सरकार के अधिकारियों एवं अन्य से एक गहन विचार-विमर्श किया एवं ठोस निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास किया। हमारे देखने में कुछ महत्त्वपूर्ण पहलू सामने आए। इन पहलुओं पर तुरंत ग़ौर फ़रमाने की ज़रूरत है।

1. कृषि विज्ञान केंद्रों पर उपकरणों की कमी को किसानों द्वारा उजागर किया गया। इसकी पूर्ति जल्दी से जल्दी कर लेनी चाहिए।
2. सरकार अपनी तरफ़ से सिंचाई की सुविधा देने की कोशिश कर रही है। लेकिन अभी पर्याप्त नहीं है और पुरज़ोर प्रयासों की आवश्यकता है।
3. एक फसली पद्धति में जोख़िम ज़्यादा है इसलिए बहु फसल पद्धति, सूखी खेती (Dry farming) का प्रचलन में लाना ज़रूरी है।
4. कृषकों के लिए बीज एवं औषधि समय पर मिलना अति आवश्यक है। यह कार्य शीघ्र-अतिशीघ्र करना ज़रूरी है।

❑

संदर्भ

1. 'राजस्थान की जनसंख्या' जनसंख्या जनगणना कार्यालय, नई दिल्ली, भारत सरकार (2011)
2. 'राजस्थान के जैसलमेर तथा पोखरण के कृषि विज्ञान केंद्र का समीक्षा दौरा', यादव ए.के. एवं अरूण कुमार, प्रकाशित, हिंदी बुलेटिन जनवरी-जून, 2018, अंक-7, राष्ट्रीय श्रम अर्थशास्त्र अनुसंधान एवं विकास संस्थान, दिल्ली।

डॉ. विदुषी शर्मा

संसद के केंद्रीय कक्ष में राष्ट्रभाषा उत्सव कार्यक्रम

संसदीय हिंदी परिषद्, विधि भारती परिषद् एवं परिचय साहित्य परिषद् के अथक प्रयास से इस वर्ष 16 नवंबर, 2018 को सायं 3.30 बजे संसद के केंद्रीय कक्ष में राष्ट्रभाषा उत्सव, राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान एवं 'हिंदी हमारा स्वाभिमान' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन सफल एवं सुचारु रूप से संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम में सैकड़ों की संख्या में श्रोतागण उपस्थित रहे।

भारत की पहचान हमारी संसद से आरंभ होती है और 'संसदीय हिंदी परिषद' भी हिंदी की पहचान है ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। राष्ट्रभाषा उत्सव और राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान एवं 'हिंदी हमारा स्वाभिमान' विषय पर संगोष्ठी के मुख्य अतिथि डॉ. सत्यनारायण जटिया, पूर्व केंद्रीय मंत्री एवं संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष थे और कार्यक्रम के अध्यक्ष थे पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप, पूर्व महासचिव, लोक सभा एवं भारत के प्रतिष्ठित संविधानविद्। विशिष्ट अतिथियों में थे डॉ. अवनीश कुमार (अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग एवं निदेशक केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार) श्री रामशरण गौड़, (अध्यक्ष, दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड) प्रोफेसर, डॉ. पूरनचंद टंडन, (प्रोफेसर, हिंदी विभाग एवं दिल्ली विश्वविद्यालय), डॉ. रमा, प्राचार्य, (हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय)। सत्या बहिन (अध्यक्ष, संसदीय हिंदी परिषद्), श्रीमती संतोष खन्ना जी (विधि भारती परिषद् की महासचिव एवं उर्मिल सत्य भूषण जी (अध्यक्ष, परिचय साहित्य परिषद) भी मंचासीन थीं। श्रीमती संतोष खन्ना ने सभी अतिथियों को मंच पर आमंत्रित कर उनका सभागार में उपस्थित श्रोताओं से परिचय कराया।

कार्यक्रम का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुआ। माँ सरस्वती की आराधना की गई जिसके लिए श्री रामलोचन जी को आमंत्रित किया गया जिन्होंने अपने मधुर कंठ

से माँ शारदा की आराधना की। श्रीमती सत्या बहिन जी ने सभागार में उपस्थित सभी का स्वागत किया। उनके वक़्तव्य बहुत ही ओजस्वी एवं प्रेरक थे। उन्होंने सभी भारतवासियों को चेताया कि यदि हिंदी हमारी माँ है और हमारी रगों में उसका खून दौड़ रहा है तो क्यों हमें हिंदी दिवस मनाने की और इस प्रकार की हिंदी की संगोष्ठियाँ करने की आवश्यकता पड़ रही है। यह सच ही है कि आज़ादी के 70 वर्षों के बाद भी हिंदी की संगोष्ठी या हिंदी दिवस और पखवाड़े मनाने की आवश्यकता पड़ रही है। आज ज़रूरत है तो इस बात की कि हम हिंदी को अपने स्वाभिमान की भाषा बनाएँ।

इसके बाद, राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान प्रदान किए जाने की बारी आई। प्रथम सम्मान प्रतिष्ठित साहित्यकार, डॉ. गुरुचरण सिंह जी को प्रदान किया गया जिसमें प्रशस्ति पत्र, स्मृति चिन्ह, एक शॉल, पुस्तक पैकेट और प्रमाण-पत्र देकर उन्हें सभी मुख्य अतिथियों के द्वारा मंच पर सम्मानित किया गया। इसके बाद डॉ. प्रत्यूष वत्सला जी का सम्मान भी इसी प्रकार किया गया। राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान की इस शृंखला में तीसरा सम्मान श्री रमेशचंद्र सभरवाल जी को प्रदान किया गया जिन्होंने विपुल साहित्य की अनेक पुस्तकों की रचना कर हिंदी को बहुत आगे बढ़ाया है। इसके बाद, राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान पुरस्कार अमेरिका वासी डॉ. अनीता कपूर जी को प्रदान किया गया। इसी श्रेणी में अंतिम नाम डॉ. स्नेह ठाकुर जी का था। डॉ. स्नेह ठाकुर वर्षों से कनाडा में रहते हुए अनेक पुस्तकों की रचना कर तथा 'वसुधा' जैसी अच्छी पत्रिका का प्रकाशन कर विदेश में हिंदी को उसकी बुलंदियों पर ले जाने के लिए सतत प्रयत्नशील हैं। इसके बाद डॉ. अवनीश जी ने केंद्रीय हिंदी बृहद कोश, निदेशालय द्वारा प्रकाशित भाग 1 एवं भाग 2 जटिया जी को एवं डॉ. सुभाष कश्यप जी को भेंट किए।

संगोष्ठी का दूसरा पड़ाव आरंभ हुआ जहाँ संतोष खन्ना जी की पुस्तक 'सेतु के आर पार' नाटक का लोकार्पण किया गया। सन्तोष खन्ना जी का यह नाटक अनुवाद विधा पर आधारित है जो नाटकों की शृंखला में अपने क़िस्म का पहला नाटक है। डॉ. शिखा कौशिक की पुस्तक 'नूतन रामायण' का भी लोकार्पण किया गया। इसी के साथ हमें ये जानकर प्रसन्नता हुई कि 'औरत कट्टर नहीं होती' के लिए शिखा जी को यूपी सरकार ने सम्मानित किया गया है। यह हिंदी भाषा और भारत के लिए गौरव का विषय है।

इसके बाद 'हिंदी हमारा स्वाभिमान' विषय पर परिचर्चा आरंभ हुई। इस विषय पर विषय प्रवेश डॉ. पूरनचंद टंडन जी ने किया जिसमें सभी का अभिवादन करने के बाद उन्होंने युग पुरुष भारत रत्न श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के संदर्भ से अपनी बात कहना प्रारंभ किया। उन्होंने कहा आधुनिक हिंदी भाषा आधुनिक काल की हिंदी है। छायावाद की संस्कृति की, सिनेमा की, संवाद की, बाज़ार की भाषा भी यही है। व्यवसायिक दृष्टि

से बाज़ारीकरण की भाषा हिंदी है, उच्च शिक्षा की भाषा भी हिंदी है। हमारे जीवन के हर क्षेत्र में प्रवेश कर चुकी हिंदी हमारे रवाभिमान की भाषा भी है।

इसके बाद हिंदी हमारा स्वाभिमान कविता का पाठ किया गया जिसमें युवा कवि अनुरागेंद्र निगम ने हिंदी कविता में बताया कि हिंदी क्या है? हिंदी की विशेषताएँ 'भावों को शुद्ध करे, विश्व में जो गूँजे, हिंदी यह हमारी है' बहुत ही सुंदर कविता का पाठ उन्होंने किया। इसके बाद श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण जी की पुस्तक 'बाल साहित्य समग्र' तथा श्रीमती आर्यावर्ती सरोज 'आर्या' की पुस्तक 'छोटी मालकिन : स्त्री एक प्रतीक्षा' का लोकार्पण किया गया।

संगोष्ठी अपने समापन की ओर बढ़ रही थी। वक़्तव्य की शृंखला में अब डॉ. रमा ने अपना वक़्तव्य प्रारंभ किया। इनके वक़्तव्य इतना प्रभावशाली, ओजस्वी एवं युवाओं को के लिए जोश और आकांक्षा और प्रेरणा से भरे थे कि संसदीय हॉल में तालियों की गड़गड़ाहट से उनकी प्रशंसा बार-बार की जा रही थी। यह एक वक़्ता के लिए बहुत बड़ा सम्मान है। इसके बाद डॉ. अवनीश कुमार जी ने अपने बात प्रारंभ की और उन्होंने माना कि भाषा संस्कार एवं संस्कृति की पूरक है। राष्ट्रभाषा के सम्मान के लिए उन्होंने सभी को बधाई दी एवं उन्होंने कहा कि आधुनिकता के साथ ज्ञान-विज्ञान के साथ हिंदी भाषा को जोड़ना होगा तभी यह व्यवसायिक भाषा बन पाएगी। 'चिंतन सदैव मातृभाषा में ही संभव' है। समस्त ज्ञान को हिंदी में उपलब्ध करने की आवश्यकता आज सबसे ज़्यादा दिखाई पड़ रही है। उन्होंने सूचना दी कि वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने यू-ट्यूब चैनल तथा इसकी वेबसाइट भी आरंभ कर दी है। तत्पश्चात डॉ. देवराज वोहरा की पुस्तक का लोकार्पण किया गया। इस बीच डॉ. कीर्ति काले जी, जो कार्यक्रम का सुंदर संचालन कर रही थीं, ने भी अपनी सुमधुर वाणी में अपनी रचनाओं से श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया। उन्होंने अपनी कविताओं का भी सस्वर-वाचन किया जिसे दर्शकों द्वारा पसंद किया गया।

डॉ. रामशरण शर्मा गौड़ जी ने अपनी बात करनी आरंभ की। यह सबसे अनुभवी एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व हैं जिन्होंने संसद के इसी कक्ष में हिंदी भाषा को राजभाषा बनने के तथ्य को रेखांकित करते हुए हिंदी के महत्त्व को उसके सही परिप्रेक्ष्य में आँकने की ज़रूरत पर बल देते हुए कहा कि मैकाले की शिक्षा पद्धति अंग्रेज़ों द्वारा जो चलाई गई थी उस से मुक्त होने का समय आ गया है। अंग्रेज़ी पढ़ना और पढ़ाना बुरी बात नहीं है परंतु अपने धर्म, अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता इन सब में हिंदी को लाएँ एवं हिंदी के माध्यम से ही यह सभी चीज़ें हमारे जीवन में उतार पाएँ, ऐसा हम संकल्प लें। यह कहकर उन्होंने सभी को शुभकामनाएँ दी। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. जटिया जी ने

अपनी बात का शुभारंभ संस्कृत के श्लोक के साथ किया और अपने लोक सभा और राज्य सभा के अनुभव को साझा करते हुए बातों-ही-बातों में कुछ ऐसी बात कही कि वह सब के दिलों में घर कर गई। जटिया जी का वक़्तव्य कई चीज़ों का सम्मिश्रण था उसमें कविताएँ थी, उसमें संस्कृत के श्लोक थे, उसमें उनके अनुभव थे, उसमें भाव थे, और साथ में ही एक आह्वन था, भारत के स्वाभिमान को जगाने की बात थी।

उन्होंने कहा जब राष्ट्रीय गान और राष्ट्रीय गीत हमारी भारत की पहचान है और वह हिंदी में है तो हिंदी से हमारी पहचान जीवन के हर क्षेत्र में क्यों नहीं है? ये केवल साहित्य सृजन की भाषा नहीं होनी चाहिए। उन्होंने सभी राष्ट्र-भाषा गौरव-सम्मान प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों एवं जिनकी पुस्तक का लोकार्पण हुआ था उन सभी को बधाई दी। डॉ. सुभाष कश्यप जी ने अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. सरोजिनी महिषी जी को श्रद्धांजलि देते हुए अपनी बात की और इसी के साथ उन्होंने संतोष खन्ना जी, उर्मिल सत्य भूषण जी और सत्या बहिन को इस परंपरा को निर्बाध रूप से निभाए जाने के लिए बधाई दी। श्रीमती सविता सिंह नेपाली के काव्य-संग्रह का तथा अरविंद भारत संपादित 'अखंड भारत' एवं सूर्य प्रकाश सेमवाल संपादित 'हिम उत्तरायणी' त्रैमासिक पत्रिकाओं का भी लोकार्पण किया गया। श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण ने विधिवत् रूप से सभी का धन्यवाद किया।

अंत में संतोष खन्ना जी के द्वारा सभी को धन्यवाद करते हुए कहा कि जो छात्र और अध्यापकगण राजस्थान, हरियाणा और उत्तर प्रदेश से आए हैं और जो भारतीय अनुवाद परिषद् के छात्र आए हैं वह यहाँ सभी हिंदी प्रेम के कारण आए हैं। इसके पश्चात्, राष्ट्रीय गान के साथ इस अविस्मरणीय संगोष्ठी का एक सुखद समापन हुआ।

इस कार्यक्रम की सफलता की एक कसौटी यह रही कि लोक सभा टी.वी. ने इस पूरे कार्यक्रम को अपने चैनल पर प्रसारित और पुनः प्रसारित किया। राज्य सभा टी.वी ने इसे अपने चैनल पर प्रसारित किया। हम इसके लिए लोक सभा एवं राज्य सभा, दोनों के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हैं।

❑

सन्तोष खन्ना

1. सबरीमाला मंदिर पर उच्चतम न्यायालय का फ़ैसला

उच्चतम न्ययालय की पाँच-सदस्यीय पीठ ने 28 सितंबर, 2018 को केरल के सबरीमाला मंदिर में 10 वर्ष से 50 वर्ष की महिलाओं के प्रवेश पर रोक के संबंध में फ़ैसला देते हुए सभी महिलाओं को मंदिर में प्रवेश की अनुमति दे दी। इस न्यायिक पीठ में भारत के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री दीपक मिश्रा के नेतृत्व में यह फ़ैसला दिया गया था। इसमें चार न्यायधीशों ने महिलाओं के प्रवेश की अनुमति दे दी जबकि पाँचवीं न्यायधीश न्यायमूर्ति इंदू मल्होत्रा ने इससे विमत फ़ैसला दिया। सबसे पहले हम देखते हैं कि यह फ़ैसला क्या था? मुख्य न्यायधीश दीपक मिश्रा, न्यायमूर्ति आर.एफ. नरीमन, न्यायमूर्ति खानविलकर तथा डी. वाई. चंद्राचूड़ ने सर्वसम्मति से यह फ़ैसला दिया कि सबरीमाला मंदिर में 10 से 50 वर्षों की महिलाओं के प्रवेश पर रोक ग़ैर-क़ानूनी, असंवैधानिक और निरकुंश हैं। इस आयु वर्ग की महिलाओं के मंदिर में प्रवेश पर रोक को वैध नहीं माना जा सकता और महिलाओं की किसी शारीरिक अवस्था के कारण उन्हें प्रवेश न देना संवैधानिक कसौटी पर ख़रा नहीं उतर सकता है। दीपक मिश्रा का मत था कि महिलाओं के विरुद्ध दोहरे मापदंड अपनाना उनका अपमान करना है और यह कह कर आस्था और धर्म के क्षेत्र में भेदभाव नहीं किया जा सकता कि ऐसा सदियों से प्रथा के कारण किया जा रहा हैं। इस आधार पर पितृसत्तात्मकता को जारी रखना उचित नहीं हैं। इस फ़ैसले से सबरीमाला मंदिर में आयु विशेष वर्ग की महिलाओं के प्रवेश पर लगी रोक हट गई है। परंतु क्या इस फ़ैसले को लागू किया जा सका? वहाँ की सरकार इसे लागू नहीं कर सकी।

केरल की राजधानी तिरूवनंतपुरम से क़रीब 175 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है -- पंपा क्षेत्र। पंपा से क़रीब 5 किलोमीटर की दूरी पर लंबी पर्वत शृंखला और घने वन हैं। इसी वन क्षेत्र में स्थित हैं सबरीमाला मंदिर। यह पत्तनमत्तिट्टा ज़िले के अंतर्गत आता हैं। पंपा से सबरीमाला मंदिर तक पैदल यात्रा करनी होती हैं। मंदिर एक पहाड़ी पर स्थित है जिसकी ऊँचाई समुद्र तट से 480 मीटर है। यहाँ इस मंदिर में एक आयु विशेष की महिलाओं का प्रवेश प्राचीनकाल से वर्जित था। किंतु 2006 में मंदिर के मुख्य ज्योतिषी परप्पनगड़ी

उन्नीकृष्णन ने कहा था कि मंदिर में स्थापित अयप्पा अपनी ताक़त खो रहे हैं और वह इसलिए नाराज़ हैं क्योंकि मंदिर में किसी युवा महिला ने प्रवेश किया है। इसके बाद ही कन्नड़ अभिनेता प्रभाकर की पत्नी जयमाला ने दावा किया था कि उन्होंने अयप्पा की मूर्ति को छुआ और उनकी वजह से अयप्पा नाराज़ हुए। उन्होंने कहा है कि अब वह प्रायश्चित्त करना चाहती है।

जब जयमाला ने दावा किया कि उन्होंने गर्भगृह में जा कर आयप्पा को छुआ था तब इस बात की और ध्यान गया कि इस मंदिर में आयु विशेष की महिलाओं का प्रवेश वर्जित हैं । 1991 में केरल के उच्च न्यायलय में एक याचिका फाईल की गई थी उस पर फ़ैसला देते हुए उच्च न्यायालय ने कहा था कि प्राचीन काल की प्रथा के अनुसार 10 से 50 वर्ष की महिलाएँ इस मंदिर में नहीं जा सकती। इसलिए उसने देवास्वाम बोर्ड को निर्देश दिया कि वह इस प्रथा को बनाए रखें। 2006 में राज्य के यंग लायर्स असोसिएशन ने उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की। इसी मामले पर उच्चतम न्यायालय ने ट्रस्ट त्रावणकोर बोर्ड से महिलाओं को मंदिर में प्रवेश की अनुमति न देने पर जवाब माँगा था। बोर्ड ने कहा था कि भगवान अयप्पा ब्रह्मचारी हैं और इस वजह से मंदिर में आयु विशेष की महिलाओं के प्रवेश पर रोक लगी हुई है। इसके बाद इस मामले में कई उतार-चढ़ाव आए किंतु वर्ष 2018 में उच्चतम न्यायलय ने इस याचिका पर अपना फ़ैसला सुनाया कि शारीरिक कारणों से महिलाओं के मंदिर में प्रवेश पर रोक लगाना संविधान के प्रावधानों के विरुद्ध है। उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि महिलाओं के प्रवेश पर रोक भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 25 का उल्लंघन है। उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने अपने फ़ैसले में कहा कि महिलाओं के मंदिर में प्रवेश पर रोक हिंदू धर्म का आवश्यक हिस्सा नहीं हैं बल्कि यह धार्मिक पितृसत्तात्मकता का हिस्सा है। न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड ने कहा कि महिलाओं के मंदिर में प्रवेश पर रोक लगाना ग़लत है। किंतु न्यायधीश न्यायमूर्ति इंदू मल्होत्रा ने विमत फ़ैसला देते हुए कहा कि धार्मिक परंपराओं के बारे में फ़ैसला करने का अधिकार धार्मिक लोगों को करने देने चाहिए। इसके बारे में न्यायालयों को दख़ल नहीं देना चाहिए क्योंकि धर्म के बारे में क्या सही है या क्या तर्कसंगत है, इसका फ़ैसला न्यायालयों को नहीं करना चाहिए। उच्चतम न्यायालय के इस फ़ैसले को अभी तक लागू नहीं किया जा सका हैं क्योंकि इस फ़ैसले के विरुद्ध बहुत सारी महिलाओं ने अपना विरोध प्रकट किया और मंदिर के स्थल पर एकत्रित हो गईं थीं और उन्होंने किसी को भी अंदर नहीं जाने दिया। 19 अक्टूबर, 2018 को दो महिलाओं ने मंदिर में प्रवेश का प्रयास भी किया किंतु उन्हें अंदर नहीं जाने दिया गया। वहाँ पर मंदिर से यह चेतावनी दे दी गई थी कि यदि वह मंदिर में जाने का प्रयास करेंगी तो वह मंदिर ही बंद कर देंगे। उन दोनों महिलाओं को वापस लौटना पड़ा।

यह मामला पुनः उच्चतम न्यायालय में पहुँच गया है। उच्चतम न्यायालय विरोध के कारण उत्पन्न नई स्थिति के आधार पर कब और क्या फ़ैसला देगा, यह अभी भविष्य के गर्भ में है।

❑

2. विभाजन की त्रासदी का दंश : न्यायमूर्ति सेन का फैसला

10 दिसंबर, 2018 को मेघालय के उच्च न्यायलय के न्यायधीश न्यायमूर्ति एस.आर सेन ने एक निर्णय दिया था जिसके विरुद्ध कुछ लोगों ने हाय-तौबा मचा दी थी। उन्होंने अपने उस निर्णय में कहा था कि ''भारत के विभाजन के बाद पाकिस्तान ने अपने को इस्लामी राज्य घोषित कर लिया था और भारत जिसका विभाजन घर्म के आधार पर हुआ था, को भी स्वयं को हिंदू राष्ट्र घोषित करना चाहिए था किंतु वह घर्म निरपेक्ष देश बना रहा।'' उन्होंने अपने फ़ैसले में कहा है कि केंद्र सरकार को पाकिस्तान, बंग्लादेश और अफगानिस्तान से आने वाले ग़ैर-मुस्लिमों और आदिवासियों को भारत में बिना किसी दस्तावेज़ के यहाँ बसाने के लिए क़ानून बनाना चाहिए।''

न्यायमूर्ति सेन ने अधिवास (डोमीसाइल) संबंधी एक याचिका में अपने फ़ैसले में यह उपरोक्त टिप्पणी की थी। अब उन्होंने अपने उस फ़ैसले के संबंध में स्पष्टीकरण देते हुए लिखा हैं कि ''मैं कोई कट्टर धार्मिक नहीं हूँ। मैं सभी धर्मों का आदर करता हूँ क्योंकि मेरा विश्वास है कि ईश्वर एक हैं।'' उन्होंने यह भी कहा कि वह धर्म निरपेक्षता का आदर करते हैं :--

''धर्म निरपेक्षता भारतीय संविधान के आधारभूत अंगों में से एक अंग है और इसके आगे धर्म, जाति, पंथ, संप्रदाय या भाषा के आधार पर बँटवारा नहीं होना चाहिए। मैंने अपने फ़ैसले में धर्म निरपेक्षता के विरुद्ध कुछ नहीं कहा हैं और मेरे फ़ैसले में इतिहास का संदर्भ दिया गया है और इस इतिहास को बदला नहीं जा सकता हैं।''

न्यायधीश सेन ने अधिवास प्रमाण-पत्र देने संबंधी एक मामले में प्रधान मंत्री श्री मोदी तथा अन्य केबीनेट मंत्रियों से अनुरोध किया था कि वह कोई ऐसा क़ानून बनाएँ जिसके अंतर्गत हिंदू, सिख, जैन, बौद्ध, पारसी, ईसाई, ख़ासी, जातियाँ और गारो लोगों को भारत में सुगमता से प्रवेश मिल सके और उन्हें यहाँ बसाया जा सके। अपनी इस टिप्पणी के बारे में सेन ने स्पष्टीकरण देते हुए कहा है कि प्रधान मंत्री मोदी की सरकार से उनका अभिप्राय लोक सभा और राज्य सभा के माननीय सदस्यों से था अर्थात् मैंने सभी क़ानून निर्माताओं से अनुरोध किया था। मैंने पश्चिम बंगाल की मुख्य मंत्री ममता बनर्जी का भी उल्लेख किया था। मेरा अनुरोध वास्तव में नीति निर्धारिकों से था।

श्री सेन ने अपने फ़ैसले में पड़ोसी देशों से भारत आने वालों के प्रवेश को सरल करने

का सुझाव दिया था। उनका कहना है कि वह लोग उन देशों में धर्म के आधार पर सताए जाने के कारण भारत में आते हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि देश के विभाजन के कारण हिंदू और सिखों को सब से अधिक मुसीबतें उठानी पड़ी हैं।

भारत का यह विभाजन अवांछित था और इस विभाजन के अंर्तगत सीमांकन सही नहीं किया गया है। श्री सेन ने अपने फ़ैसले में कहा है कि ''पाकिस्तान, बंग्लादेश आदि से यह लोग भारत में इसलिए आते हैं क्योंकि उन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी धर्म के नाम पर अत्याचार सहने पड़ते हैं और इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि वहाँ ऐसे लोगों को हमेशा सताया जाता रहा है। इन अभागे लोगों के कई अपने वहाँ मारे जा चुके हैं और उनकी संपत्ति भी उनसे छीन ली जाती है। उन्हें अपनी अजीविका कमाने के साधन भी उपलब्ध नहीं किए जाते, इसलिए उन्हें वहाँ से भारत आना पड़ता है। अभी तक उन्हें वहाँ धार्मिक अत्याचारों का सामना करना पड़ रहा है। हमें याद रखना होगा कि इन लोगों को भारत में इसलिए आना पड़ता है क्योंकि यह विभाजन ग़लत था, धर्म के आधार पर था और क्षेत्रों का बँटवारा भी ग़लत आधार पर हुआ है और इनके साथ इन्हें धार्मिक आधार पर सताया जाता है।

ऐसे लोग भारत में पीढ़ी-दर-पीढ़ी रहते आए हैं परंतु इस अधिवास के उनके पास कोई रिकार्ड या दस्तावेज़ नहीं हैं। उन्हें पुनः उजाड़कर वापस भेजना अमानवीय होगा। इन भारतीय नागरिकों को जन्म प्रमाण-पत्र, स्थानीय प्रमाण-पत्र और अधिवास प्रमाण-पत्र जारी किए जाने चाहिए ताकि लोग यहाँ एकता, शांति और परस्पर प्रेमभाव से जीवन व्यतीत करें।

डॉ. सेन ने अपने निर्णय में यह भी कहा है कि ''देश में इस प्रकार आए लोगों को किसी एक राज्य या क्षेत्र में नहीं पूरे देश में बसाया जाए सभी राज्यों को ऐसे लोगों को अपनें यहाँ बसाने के लिए आगे आना चाहिए। क्योंकि यह हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी, खासी, जातियाँ एवं गारो हमारे अपने भाई बहिन हैं। इन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए अपनी आजीविका, अपनी संपति खोई हैं और अपने सगे-संबंधियों का बलिदान दिया है और हमें उनके इन बलिदानों को भुलाना नहीं चाहिए। भारत का संविधान इस देश के हर नागरिक को यह अधिकार देता है कि वह देश के किसी भी कोने में रह सकते हैं और यह देश के नीति और क़ानून निर्माताओं पर निर्भर करता है कि वह इनके लिए क्या क़दम उठाएँ।''

अपने स्पष्टीकरण में न्यायमूर्ति सेन ने यह भी कहा है :--

''जो भी सचाई है, इतिहास है और उसके आधार पर जो भी यथार्थ स्थिति है, मैंने उसी के आधार पर अपना फ़ैसला दिया है क्योंकि मैं चाहता हूँ कि हमारे देश में नागरिक चाहें उनका धर्म, जाति, भाषा आदि कोई भी हो, उन्हें यहाँ देश में सुरक्षा मिलनी चाहिए और लोगों को अपने इतिहास की वास्तविकता को ध्यान में रख कर यहाँ शांति और प्रेम भाव से रहना चाहिए।''

बड़े अफ़सोस की बात है कि इस देश में कुछ लोग न इतिहास को समझना चाहते

हैं और न ही इतिहास की वास्तविकता को। भारत का विभाजन धर्म के आधार पर हुआ। उस विभाजन का परिणाम अभूतपूर्व हुआ था। लाखों लोगों को अपना घर बार संपत्ति छोड़ शरणार्थी होना पड़ा था। विभाजन की त्रासदी में कितना रक्त पात हुआ, इतिहास में ऐसी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती। कुछ अभागे जो उस समय नहीं आए थे उन्हें वहाँ शांति से नहीं रहना दिया जाता और उन्हें ऐसे लोगों को भारत में बसाने का यहाँ के कर्णधारों द्वारा अभी तक कोई क़ानून नहीं बनाया गया है। यहाँ पर धर्म निरपेक्ष व्यवस्था बना कर मुसलमानों को सुरक्षापूर्ण रखा जाता है पर पाकिस्तान, बंगलादेश में तो हिंदू, सिख आदि सुरक्षित नहीं हैं। ऐसे में वे अभागे कहाँ जाएँगे? न्यायमूर्ति सेन के फ़ैसले पर शीघ्र अमल होना चाहिए और ऐसे लोगों को देश के हर हिस्से में बसने की आज़ादी दी जानी चाहिए।

❑

टैगोर की बंगला कविता का हिंदी अनुवाद

रविंद्रनाथ टैगोर

कभी कभार

कभी-कभार
हो जाती है तुम से मुलाकात
ओ प्रिय प्रभु,
क्यों नहीं मिल जाते तुम
हो जाओ हमेशा मेरे साथ
क्यों छा जाते हैं
मेरे मानस गगन में बादल
बन जाते दीवार
होने नहीं देते मुलाकात।
बंद खुली पलकों में
कौंध जाता तुम्हारा ज्योतित स्वरूप
तभी भर जाता डर का अहसास
कहीं खो न दूँ तुम्हें
खो देता हूँ तुम्हें अचानक, तुम्हारा हाथ।
ओ प्रभु, बताओ न कैसे पाऊँ तुम्हें
रख लूँ अपने हृदय में और बंद कर लूँ कपाट
तुम्हें पाने के बाद
नही रहेगा शेष कुछ पाना
यही है वायदा मेरा हमेशा के लिए तुम्हारे साथ।
कहो तो त्याग दूँ सभी इच्छाएँ,
अभिलाषाएँ और दुनिया का साथ।
कभी-कभार,
हो जाती है तुम से मेरी मुलाकात।

अनु. सन्तोष खन्ना

❑

Dr. Archana Vashishth

Positions of the Migrant Workers from India : A Brief Survey

Abstract

This piece of work focuses on today's systematic violations of migrant worker's human rights with h*igh rates of physical, sexual, and psychological abuse which impact the health of domestic workers. Through a review of available literature, we can see the socio-economic impacts of migrant workers at national and international level.*

The need to manage risk and secure livelihoods can be the main driver of migration decisions; however, at the same time, a derived demand for various forms of social protection, state and non-state, may arise from the migration process. It is important to understand the interests of migrants and both host and source country governments to investigate and fully understand the implications of legal, physical and political access structures to social protection.

Keywords: Migrant Workers, Magnitude of Migration in India, Streams of Migration in India and foreign countries, Cause of Migration, How people Migrate, Impact of Migrant Worker, Committee of Migrant Worker, Legal Protection for Migrant Workers, Few Headlines from Times of India…….

Introduction

'Migrant workers, those workers, who migrate from one area to another area within the state or country in order to get seasonal or temporary or part time work in different sectors.'

Migration in India is in existence historically, and also an important feature of human civilization. It reflects human endeavor to survive in the most testing conditions both natural and manmade. Globalization assumes

special significance, for Trade Unions and Civil Society. As a consequence of the neo-liberal policies followed by the successive governments, there are serious income disparities, agrarian distress, inadequate employment generation, vast growth of informal economy and the resultant migration from rural areas to urban, urban to urban and backward to comparatively advanced regions in the most appalling conditions. Under the pressure from the International Finance Capital, Governments both Central & Provincial are further de-regulating the labour markets and further enlargement of the informal sector. In the given context, Migrant Labour poses a serious threat and challenge to Civil Society in general and Trade Unions in particular.

According to International Labour Organization's principles and rights at work, core rights are important for working class in the world economy. India is a developing country. India adopted new economic policy in 1991, which is known as liberalization, Privatization and Globalizations (LPG). New economic policy has changed the face of the country. Globalization brings in its wake restructuring of production processes, and employment relations. (Mishra, 2001). In the era of globalization, it is necessary to discuss relevant aspects of labour standards and labour rights, dimensions of decent work in respect of migrant workers in the developing countries like India.

The labour migration is not applicable within one region or one country, it also prevails in from one country to another for centuries, people have moved across borders in search of better opportunities. The potential of contemporary labour migration to strengthen the global economy is undermined by the inconsistent values of globalization. Ideological passion for free movement of goods and capital is not extended to people. Instead, the richer countries allow short term political pressures to restrict movement of migrant workers and impinge on their rights. Long term drivers of migration suggest that both rich and poor countries might be wiser to encourage its flow to meet their respective interests.

Migrant workers are motivated by a lack of opportunities at home and the belief that they can achieve a better life in a foreign country. They join the supply of migrant labour when the combination of these "push" and "pull" forces overwhelms the wrench of leaving familiar surrounds and the risks of the unknown.

The choice of destination is greatly constrained by the expense and debt incurred for travel costs, official permits fees and, all too often, the unofficial levies of intermediary fixers. The poorest are least able to overcome these obstacles and about 40% of all economic migrants head for the nearest country

Magnitude of Migration in India :--

Migration in India is predominantly short distance with around 60% of migrants changing their residences within their district of birth and 20% within their state (province), while the rest move across the state boundaries. The total migrants as per the census of 1971 are 167 million persons, 1981 census 213 millions, 1991 census 232 million and 2001 census 315 millions. As per the census of the year 1991, nearly 20 million people migrated to other states seeking livelihood. Within a decade, the number of inter state migration doubled to 41, 166, 265 persons as per the census figures of 2001. It is estimated that, the present strength of inter state migrants is around 80 million persons of which, 40 million are in the construction industry, 20 million as domestic workers, 2 million as sex workers, 5 million as call girls and somewhere from half a million to 12 million in the illegal mines otherwise called as "small scale mines". It is estimated that at present around five and a half million Indians are working in the oil exporting countries of middle-east and another 2 millions in the developed world.92% of the domestic workers are women, girls and children and 20% of these females are under 14 years of age, as per a study conducted by an organization called "Social Alert". There is a perceptible phenomenon in this migration, that is, the tremendous increase of women workers migrating either individually or in groups to find work. They are travelling very long distances even for short-term employment, in the absence of any prospect or promise of employment, still they are migrating. This is a disturbing trend, as in the event of not getting employment, they end up as victims of sexual abuse.

Causes of Migration :--

1. Migration in India is mostly influenced by Social Structures and pattern of Development and the development policies by all the governments since Independence have accelerated the process of migration. Few more points are mentioned below;
2. Uneven development is the main cause of Migration. Added to it, are the disparities, inter regional and amongst different socio-economic classes.
3. Due to poverty
4. Natural disasters such as flood, earthquake, war, drought etc.
5. Higher wages caused external migration to the middle-east countries by skilled and semiskilled workers. Migration of professionals such as engineers, medical practitioners, teachers and managers to developed countries constitute a small fraction of the total migrants
6. Gender discrimination

How People Migrate :--

1. **Colonial paths :** Emigrants can, in principle, go to any country that will admit them. But in practice, they tend to follow well-trodden paths, established both by historical flows and by migrant networks.
2. **Family ties :** Reinforcing the colonial patterns are family reunification programmes.
3. Another major influence on the choice of destination is the availability of a ready network of contacts.
4. **Labour brokers :** A rapidly growing migration industry has emerged, as labour brokers match demand with supply.
5. **Smugglers :** Migrants who want to enter countries illegally may travel independently but many often use the services of smugglers.
6. **Traffickers :** Trafficking is in principle different from smuggling. However, there is often some overlap between the two activities, and the perpetrators may be the same people, so they are probably best thought of as opposite ends of a continuum.
7. **Regulating migration :** Given the potential abuses that their citizens can be exposed to governments in some countries of origin are making greater efforts to manage emigration and support migrants overseas.

Impact of Migrant Workers :--

Positive

1. Reduces unemployment.
2. Generate foreign exchange.
3. Lower the growth rate of population.
4. Migration has led to an increasing number of children availing of education.

Negative

1. One of the most sensitive and striking issues is the effect on employment and income of the domestic workers.
2. Migration puts economic pressure on the families, as they were required to raise money to pay for travel expenses at exorbitant rates of interest or against mortgage of their immovable property or land.
3. Male migration from nuclear families can lead to loneliness and increased work burdens for women and also creates an emotional trauma for the elders in the family.
4. Furthermore, women and girls from these social groups rarely receive 'equal pay for equal work'

5. Poor migrants are often employed in risky jobs – industrial accidents, exposure to hazardous chemicals, long working hours and unhygienic conditions are the norm.
6. Brain drain

Committee on Migrant Workers :--

Monitoring the protection of the rights of all migrant workers and members of their families. The Committee on the Protection of the Rights of All Migrant Workers and Members of their Families (CMW) is the body of *independent experts* that monitors implementation of the *International Convention on the Protection of the Rights of All Migrant Workers and Members of Their Families* by its State parties. It held its first session in March 2004. All States parties are obliged to submit regular reports to the Committee on how the rights are being implemented. States must report initially one year after acceding to the Convention and then every five years. The Committee will examine each report and address its concerns and recommendations to the State party in the form of "concluding observations". The Committee will also, under certain circumstances, be able to consider *individual complaints* or communications from individuals claiming that their rights under the Convention have been violated once 10 States parties have accepted this procedure in accordance with article 77 of the Convention.

The Centre's staff also conducted sessions with recruitment agencies from all over the country, to raise their awareness on the real situation of migrant workers, and abuses to which they are subjected. Techniques in dealing with abused migrants, especially victims of trafficking were shared, and cooperation to handle critical cases was encouraged.

The Center advocates regularly for the cause of migrant workers. This is done through regular meetings held with relevant governmental entities. Through these efforts, the General Security has accepted on several occasions in the last years to grant an amnesty to migrant workers in an irregular situation.

For instance, after the December 26, 2004 Tsunami that hit the South-Eastern Coasts of Asia, the taxes of migrant workers from India and Sri Lanka (whose families were impacted) returning to their home countries were waived by both GS and Ministry of Labour.

The item "Legal Protection of Migrant Workers was taken up by the AALCC at its 35th Manila Session (1996) following upon a reference made by the Government of Philippines. In its reference, the Government of Philippines had invited attention to the plight of migrant workers and the denial and abuse of their basic human rights. A preliminary study prepared

by the Secretariat for the 35th Session had outlined some basic issues concerning migrant workers in Asia and Africa. Reference was also made to available legal framework within the UN System and initiates taken therein. At its Manila Session, the AALCC after exchange of views, urged member States to transmit their views to the Secretariat as to how legal protection to migrant workers could be effectively implemented. The study prepared for the 36th Session (Tehran) focused on some international trends in migration, the proposal for an International Tribunal and the UN Convention on the Protection of Migrant Workers.

This is in line with Article 25 of the International Convention on the Protection of the Rights of All Migrant Workers and Members of Their Families, which states that:

"Migrant domestic workers shall enjoy treatment not less favorable than that which applies to citizen of the country of employment in respect of remuneration and other conditions of work, such as overtime, hours of work, weekly day off, holidays with pay, safety, health, termination of the employment relationship and any other conditions of work which, according to national labour law and practice, are covered by these terms."

It would be useful to look at the issue of the rights of migrants from two different perspectives that of illegal migration and legal migration.

Illegal migration is a multi-million dollar industry, with the craze to go abroad and earn in dollars resulting in gullible people being lured by agents, many of whom are fly-by-night operators. They charge anywhere between Rs. 100,000 to Rs, 300, 000, depending upon the country to which they promise to take potential emigrants. Migration to the United States fetches the highest price (Rs. 1,200, 000–1, 500, 000), followed by Canada (Rs. 800,000-1, 200,000), the United Kingdom (Rs. 500,000-700,000), Europe (Rs.400,000-500,000) and Malaysia and Thailand (Rs.100,000).The United States is the most preferred destination of illegal migrants from India. According to the United States Immigration and Naturalization Services (INS), 12, 000 illegal migrants entered the country during 2001 to 2002.43 In 1998, the American Government busted an Indian immigration racket and 31 persons were indicted. Various routes are used to reach the United States. These include Thailand, East Europe, Russia, Mexico and Canada. Though the largest numbers of illegal migrants come from Punjab and Gujarat, the phenomenon is now spreading to Maharashtra, Kerala and Tamil Nadu.

In the case of legal migration, necessary steps have been taken to minimize the problems relating to labour and human rights. Indian diplomatic missions and Protector of Emigrants keep in regular touch, with a view to determining the appropriate wages and other working conditions. Prospective employers and recruiting agents are required to submit an

authenticated copy of the contract at the time of seeking emigration licenses. Diplomatic missions also provide all possible assistance in resolving issues relating to labour and human rights. They keep in constant touch with the workers and seek the assistance of local governments, whenever it is required. In Malaysia, there was an association of Indian welders, who were encouraged to keep in touch with the Indian High Commission. Migrant workers do occasionally experience violation of their human rights on account of ethnic or religious differences, though the number of such complaints is coming down. Migrants face racist attitudes even from police officers in the United Kingdom, as pointed out in a recent British Broadcasting Corporation (BBC) documentary film, "The Secret Policeman". The Indian community has been the target of racist attacks in the United States and groups like the 'Dot Busters' have targeted Indian women (who were red vermilion dots on their foreheads). The Indian Government has taken certain steps to redress the grievances of migrant workers.

Legal Protection for Migrant Worker :--

1. Being non-citizens in countries with at best a thin democratic veneer on a despotic political structure, the expatriates have little legal recourse to protest bad, even brutal working conditions, and abuse
2. Women domestic workers are especially vulnerable to physical, sexual and psychological abuse.
3. Without rights in a foreign land and generally with no or poor Arab language skills, maids are often forced to work 16 hours a day or more and without even one day off per week.
4. Another source of abuse is the indenture-style relations that foreign-workers often enter into with labour-recruitment companies.
5. Most of the Indian workers in Oman have migrated from the south Indian states of Kerala, Tamil Nadu and Karnataka or come from Maharashtra and Punjab. Many are employed in construction work.
6. Without any protection from the Labour Law, the employers are free to prevent the workers from leaving the residence, or deny them from making telephone calls.

Conclusion

In the sum, there is a need to understand the drivers and impacts of migration better in order to move away from the common lamenting of 'distress migration' as a destructive and impoverishing process. The first step is to recognize that policies have hitherto been inadequate. There is also a need to understand migration properly in order to manage urban development better and appreciate the poverty reducing benefits of

urbanization. The aim is to clean up urban areas without any concrete plans for providing facilities to temporary residents. Likewise, a better understanding of migration would also help in the formulation of more realistic rural development strategies that recognize and support multi-location livelihood strategies, and help people to make informed choices about where they want to work without forcing them to live off local agriculture alone.

After independence, India has adopted various labour policies in order to improve working conditions of workers in the unorganized sector. There are also various labour laws for these workers. In tact, its implementation is mostly ineffective. Therefore, migrant workers and workers in the unorganized sector are struggling for their labour rights and to implement the provisions of various labour laws as per International labour standards. Therefore, the government of India should ratify all the relevant international covenants that respect the dignity of labour, especially important ILO Conventions No. 87. the freedom of association and protection of the right to organize convention, and the ILO convention 98, the right to organize and collective bargaining convention. Workers, whether industrial workers or employed with the government should have an inalienable right resort to strike. Uniform labour standards in the context of unorganized sector workers, like migrant workers, should be implemented in rural and urban areas of India. It is necessary to protect migrant and other workers in the unorganized sector by International labour standards.

❑

References

1. Progress report by Vikas Sahyog Pratishthan.
2. Migrant workers and human rights to migrate from south Asia report Edit by Pong-Sul-Ahn, first published in 2004.
3. Heath issues of migrate and seasonal frame workers by Eric Hansen, MD from St. Mary's medical centre, san Francisco Martin Donohoe, MD from old town clinic and Oregon health and science university.
4. Labour rights and workers Standards for migrant worker in India by Dr.W.N. salve.
5. Migration in India trade union perspective in the context of Neo-liberal globalization by Sudhuershern Rao Sarde in regional representative, IMF – Saro in New Delhi.

Birbhadra Karkidholi, Sikkim

Rashtra Bharati Samman; Some After-Thoughts

It is indeed an overwhelming moment for me to be here today — before this august body of the cream of intellectual strata of our GREAT NATION INDIA. Honestly, I am humbled and once again reminded of my humble beginning and humble present on the one hand and the unrivalled greatness of the Indian intelligentsia on the other. I am overwhelmed to be the part of today's National Symposium on 'Bharat me chunav : Hindi ki bhumika aur chunav sudhar' and be witness to the launching of the Mahila Vidhi Bharti magazine, issue 90 (Jan-March 2017)

I would like to express my hearty greetings to the Chief Guest Dr. Mahesh Sharma, Hon'ble Minister (Independent Charge), Ministry of Culture, Minister of State in the Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Govt. of India; Chairperson Hon'ble Justice Shri S.N. Kapoor, former Judge, Delhi High Court, Former member National Consumer Commission. Distinguished Guests Prof. Dr. Usha Tandon, Professor-in-Charge, CLC, University of Delhi; Dr. Ravi Tekchandani, Director of National Council for Promotion of Sindhi Language; Dr. Rajeev Kumar Shukla, Deputy Director General (Programme) AIR; Welcome note: Padmabhushan Dr. Subhash Kashyap, former Secretary-General Lok Sabha and Constitutional expert; Session Co-ordinator, Dr. K.S. Bhatti, former Registrar, Indian Law Institute and Advocate Supreme Court; Vote ofThanks, Dr. Ashu Khanna, Dean, Tech Mahindra Smart Academy, and eminent Hindi litterateur Urmil Satyabhushan, who is also being honoured with the Rashtra Bharati Samman **today**. Madam Santosh Khanna, the driving force behind Vidhi Bharati Parishad, the prestigious NGO to organize today's historical programme, and respected distinguished audience.

The great honour conferred on me by Vidhi Bharati Parishid in the form

of the Rashtra Bharati Samman is the greatest juncture of my life, which I will cherish as long as my heart throbs. Today, I stand here as the proudest Indian citizen for being considered worthy of one of the greatest contemporary Indian literary honors. With all humility, I express my heart-felt gratitude to Vidhi Bharati and honourable judges for considering this simple man from far off green hills of Sikkim under the tranquil shadows of Kanchenjunga worth the honour. My joy knows no bounds today as I think of the recognition I received as an *Indian writer* by the great Indian literary entity in the presence of great persons.

At the outset, I would like to make it clear that, basically, I write in Nepali, which is my mother tongue. With your kind permission, I would like to mention an incident. Just as I arrived here, on the invitation of kind hearted erudite ma'am Santosh Khanna, to participate in this great hounour bestowing ceremony, as I introduced myself to one of the noted litterateur that I was a Nepali poet from Sikkim, I was asked, "Oh when did you come from Kathmandu?" I was stunned. It is as if some well-meaning litterateur had slapped you very hard unexpectedly and with no reason whatsoever. And suddenly your world reels around you, and when you gather yourself, you know **where you stand**. You learn the status of your standing. It is very unfortunate that even after nearly three decades of the Nepali language being included in the Eighth Schedule of the Constitution of India; people, even highly qualified people, are unaware of this constitutional fact and status of our own country. It is so sad that they end up perceiving their own kind, their own fellow citizens as foreigners.

To set the record straight, I must mention briefly that after a long struggle by the Constitutional Recognition of Nepali language, Activists and patronizing political parties and the supports from different State Assemblies, the Constitution (Seventy-first Amendment) Act, 1992 made provision for the inclusion of Konkani, Meitei and Nepali languages in the Eighth Schedule of the Constitution. President Shankar Dayal Sharma ascented the bill on August 31, 1992. But that did not upset the status of the Indian Nepalese. Not only for the general populace, but sadly for the literati too, Nepali still meant and means 'of, from, or belonging to Nepal.' To be looked down upon as a second-class citizen is one thing, but to be perceived as a foreigner in one's own country by fellow citizens is as frustrating as it could be.

A Bengali writer does not have to be under the scanner, when he says he is a Bengali writer, notwithstanding the fact that Bengali is the official language of a neighbouring country Bangladesh, or erstwhile East Bengal or East Pakistan. An Urdu writer too does not have that problem;

notwithstanding the fact that Urdu is the official language of Pakistan. Neither a Tamil literati has to face the questioning eyes, when he introduces himself as a Tamil poet, notwithstanding the fact that Tamil is the one of the three official languages of Sri Lanka. Generally, we do not say Indian Bengali poet, and a Bengali poet does not have to struggle to establish his identity as an Indian poet writing in Bengali because Bengali happened to be his mother tongue. He does not have to explain that his forefathers were from undivided East Bengal, or divided East Bengal; he does not have to explain that some of his relatives still live in Bangladesh and he still inherits his portion of land in Bangladesh even today.

There has always been this identity crisis for the Nepali-speaking citizenry of India. Every Nepali-speaking citizen of India, also known as Gorkha or Gurkha, is mistaken for a citizen of Nepal. The term "Indian Gorkha" is used to differentiate the Gorkhas of Indian origin from the Gorkhas of Nepal. Indian Gorkhas are citizens of India on the basis of the gazette notification of the Government of India on the issue of citizenship of the Gorkhas of India [vide Gazette Notification on the Issue of Citizenship of Gorkhas (Published in the Gazette of India Extraordinary Part – I Section 1 dated the 23rd August 1988), No. 26011/6/88-ICI, Government of India, Ministry of Home Affairs], New Delhi the 23rd August, 1988. But it does not indicate in any way that we were not Indians before that date. Our generations have lived and died on the land that belonged to our generations. The notification defined and fortified our legal standing.

We must refer to the **Indo-Nepal Treaty of Peace and Friendship (1950)** that grants "on a reciprocal basis, to the nationals of one country in the territories of the other the same privileges in the matter of residence, ownership of property, participation in trade and commerce, movement and other privileges of a similar nature" (Article 7). Enjoying the special privileges ensured by the Treaty, many Nepalese citizens are living in India jeopardizing the status of the native Gorkhas or Nepalese of India. Fellow citizen mistake Indian Gorkhas for Nepalese citizens looking at the formers' physical features or just on hearing the word "Nepali" when they introduce themselves, which is what prompted some of the renowned litterateurs attending today's sacred programme to brutally slap on my face, *"When did you come from Kathmandu?"*

With a poet's wounded and bleeding heart, I painstakingly explain him my position *vis-a-vis* my Indian citizenship. "Oh, oh I thought you were from Kathmandu, being a Nepali poet."

I don't think a Tamil poet is ever faced with the identity crisis that I have been through, or and Urdu *shaayar,* or a Bengali poet, for that matter. I do

not think that any Bengali poet has ever had to face the embarrassing question, "When did you come from Dhaka?" Or a Tamil poet has ever had to answer the question, "When did you come from Colombo?" Or an Urdu *shayar* was ever asked, "Janab, when did you come from Karachi?"

That is the reason the Rashta Bharati Samman means a lot to me. I believe I am the first ever Indian Nepali poet from India (Sikkim) to receive this Samman, and I am grateful for that beyond words, because we, who walk with words all our lives, know that there is a limit to what words can express, when we cross that limit, words tend to lose their meaning. So far as expressing my gratitude is concerned; my words have crossed that limit in this context.

I also believe that it is not conferred on me as a Nepali poet from Nepal, but as an Indian poet, writing in Nepali, an Eighth-Schedule-enlisted language. But for perchance, if this great Samman is conferred on me as a poet from Nepal, it will be a great betrayal. For me the very purpose of the Samman will be defeated. With all humility, I will return it to register my frustration.

Not all Nepali-speaking Gorkhas of India are the citizens of Nepal. Some of them are. Others are not. The others are those who have come and settled in India enjoying the "privileges in the matter of residence, ownership of property, participation in trade and commerce, movement and other privileges of a similar nature" (Article 7, Indo-Nepal Treaty of Peace and Friendship, 1950). Of course, it is very difficult to identify and separate the Indian Nepali/Gorkhas from the Nepalese nationals, looking at their similar physical features, and language. But it does not mean Indian ethnic Nepali/ Gorkhas should be categorically single out as people from Nepal, or citizens of Nepal. So the stark question that looms large before us is how does one go about identifying a Nepali-speaking Indian citizen and a Nepali from our neighbouing country Nepal? Well, it is actually as easy as singling out Indian Bengali from Bangladeshi Bengali. Or for that matter, Indian Urdu-speaker from Pakistani citizen, or a Tamil-speaking poet from the Sri Lankan citizen. The principle is within the person asking the question; because he/she is careful not to ask such awkward questions to everybody he/she comes across.

Looking through the glasses of prejudice makes the world a different place. Similarly, looking through the coloured glasses of prejudice makes the subject looked into altogether a different subject. Since you have the glasses on, you already have preconceived ideas, perceptions. And, when you look through these glasses you start identifying every Nepali-looking person a citizen of Nepal. People subjected to unwarranted humiliation and injustice. When they travel to other parts of the country they are treated

badly. Their self-respect is damaged, a part of them dies. Such people are likely to protest in several way, some of which can have unwanted far reaching consequences. The Gorkhaland movement spearheaded by Subhas Ghising was one such consequence in which officially 1200 persons died, unofficial figure is said to be much higher.

Again, coming back to the world of letters — Indian Nepali language is one of the highly developed Indian languages. Similarly Indian Nepali literature is **among the most developed and rich literatures of India, and culturally we have a rich heritage.** There is rich tradition of Nepali language writing in India. We have writers who are worthy of national recognition and prestigious national literary awards provided their works are made available in other Indian languages. Many of the writers have started writing in at least two languages, Nepali and English, or Nepali and Hindi, Nepali and Bengali, Nepali and Assamese, Nepali and Bodo etc. We have not been able to present our litterateurs to our national readership widely enough. We have not been able to introduce them to wider readership. In recent years, a few works of the Indian Nepali writers have been translated into Hindi, Bengali, English, Tamil, Telugu, Assamese, Bodo and other Indian languages. It is just the beginning. I stand here as a witness to the contemporary trend of translating the works of Indian Nepali writers into other Indian languages, especially, into Hindi. Had the Nepali-speaking Indian litterateurs writing in the languages they translated my works into not translated my works into Hindi and other Indian languages, I would not be standing here today. Neither this prestigious honour would have been conferred on me. More and more wonderful works of contemporary writers in Indian Nepali need to translated into major national languages like Hindi, Bengali etc. It is not only because they need national exposure to change the status quo of Indian Nepali writers in respect of their identity. Another reason for doing that is they deserve to be translated into as many Indian languages as possible. There are many brilliant and gifted Indian Nepali writers and poets. Having no exposure to the national context, they are like unnoticed, uncut, rough diamond in mines. As one reads their writings and the writings of writers of any mettle from other Indian languages, one tends to say, “Oh, they are compatible in many ways!” What our unfortunate writers and poets need is experienced translators to make their works available in major Indian languages. I do not mean to say that sufficient work has been done in this regard. In fact, the work should have begun long back, but unfortunately, it did not. Now the work has just begun. It is very important to establish Indian Nepali literature on the map of Indian national literature. The question of establishing Indian Nepali literature is inherently interlinked with the question of identity of Indian Nepali-speaking people.

Because the more it is visible in the national scenario, the more the readers at large will recognize it. This familiarity and recognition will slowly percolate downwards into the general populace, of course, over a long period, I suppose. To put it in another way, Indian Nepali-speaking writers should get more and more exposure to national readership and literary forums. The eternal and true saying of the Bible that "the truth shall set you free" is very true in our context. Knowing the truth about the Indian Nepali-speaking citizenry will set our fellow citizen free of their prejudiced outlook, of their lack of knowledge. But the truth must be told and made known. Therefore, the responsibility of making the truth known to all squarely falls on the intelligentsia and the present generation.

It is my sincere hope that as time passes, lot of works of Indian Nepali writers will be translated into several Indian languages. Many Indian writers will get to know Indian Nepali writers, which is bound to result in their exposure to national literary hub. As this kind of familiarity increases, the identity of Indian Nepali writers, followed by the identity of India Nepali-speaking community, will be clear to them. And no Birbhadra will be asked by erudite literatures when he arrived from Kathmandu. No knowledgeable intelligentsia will ever stun Birbhadra again, no never.

With these facts, in the background, when I think of the prestigious Rashtra Bharati Samman, I am grateful from the bottom of my heart to Vidhibharati Parishad and especially to Ma'am Santosh Khanna once again, for taking this historically correct step. I am happy not only for myself, but for the historical implication and impacts this unprecedented step is going to have on the future of Indian Nepali-speaking community. I am positive that, in due course, it will prove to be one of the conducive factors to facilitate recognition of Indian Nepali literature and litterateurs in the national context. There should be enough of such occasions to make wide and long lasting impacts. Experienced translators having mastery and command over both languages should come forward and start doing the work. There is no dearth of good works, and for good works, there will be no dearth of publishers.

To conclude, I would like to thank Vidhibharati and Ma'am Santosh Khanna. I am indebted to her in many ways. I salute her virtues and visions. And I most respectfully offer the hounour bestowed upon me in the form of the Rashtra Bharati Samman on the altar of Indian Nepali language and literature with the hope that the identity crisis that we are going through will be a thing of the past in years to come, because I think it is given to an Indian Nepali poet, not one Birbhadra Karkidholi.

❑

Our New Life Members

235. **Dr. Poonam Khanna**
99, Model town,
Rama Krishna Lane
Near Shiva Tower,
Gaziabad-201001
236. **Ms. Tai Courasiya**
At Post Prabhat Pattan
Distt. Betul (M.P.) -460665
237. **Sh. Veerender Kumar Chadar**
113, Police Line
Tikamgarh, Distt. Tikamgar M.P.
Pin – 472001
238. **Shri. Rajendra**
C/o I.P. Verma, 24, Kailash Nagar
Near Jakhas Baba Chauraha
Jajmow, Kanpur-208010
239. **Sh. Ram Singh Patel**
C/o Amit Shrivastava
Daya Bhavan, Krisna Nagar,
Makroniya, Sagar, M.P.- 470002
240. **Sh. Ram Ashis Srivastava**
Daya Bavan
Near Asha Ram Bapu Asram
Krishna Nagar, Makroniya,
Sagar M.P.
241. **Ms. Bhavana Arora**
R - 14/194 – B
New Raj Nagar, Ghaziabad
242. **Dr. Zaki Hussain**
R/o Plot No. 52
House No. 116/630,
Bagicha Basheer, Krisnapuri
Rawatpur, Kanpur-218019
243. **Shri Anuragendra Nigam**
244. **Dr. Shobha Bhardwaj**
Assitant Professor
Department of Law
Jagran University, Bhopal
245. **Dr. Bhumika Sharma**
Assistant Professor,
Department of Laws
Solan, Himachal Pradesh
246. **Dr. Sonia Sharma**
Assistant Professor
Mata Sundari College,
DU, New Delhi
247. **Dr. Shilpi Seth**
Assistant Professor
School of Law
Mohan Lal Sukhadia University
Udaipur, Rajasthan
248. **Dr. Nilima Singh**
Assistant Professor
13 New MIG Preetam Nagar,
Allahabad-211011
249. **Ms. Vijayshree Boaddha**
Barkatullah University
Bhopal (M.P.)
250. **Dr. Nisha Kewalia**
Principal, Moti Lal Nehru Law College,
Khandwa (M.P.)
251. **Shri Guru Ditta Malhotra**
Teacher, Government School,
Talwamdi Bhai, Ferozepure
252. **Ms. Rinku Gangwani**
Lecture, School of Law,
Mohan Lal Sukhadia University
Udaipur, Rajesthan
253. **Smt. Samta Dube Tiwari**
Assistant Superindent (Jail)
Central Jail, Bhopal,
Madhya Pradesh
254. **Ms. Suman**
Research Scholar
Deptt. of Political Science
Delhi University, Delhi-110007
255. **Dr. Shikha Kaushik**
Lecturer, D.A.V. College, Budhana,
Muzaffarnagar, Uttar Pradesh
256. **Dr. Jagdish Chandra Batra**
Senior Advocate
Supreme Court of India,
New Delhi-110001
257. **Dr. Samiksha Godhra**
Assistant Professor, Law Deptt.
Central University of Haryana
Mahindra Garh, Haryana
258. **Shri Vipin Kumar Singh**
Research Scholar, Law Deptt.
Allahabad University, Allahabad
259. **Dr. Pratibha Chaudhry**
House No. 181,CH Scheme 74C
Vijay Nagar, Indore-452010
260. **Ms. Chetali Solanki**
House No. 9, New Bhopal Pura
Near Padm Lighting, M.P.- 313001
261. **Dr. Hemlata Saiwal**
Associate Professor,
Department of Law,
Sage University, Indore
362. **Dr. Priyanka**
Assistant Professor,
New Govt. Law College, Indore